पुस्तक 79 मूल्य 50 पैसे

संपादकीय

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का लक्ष्य पेयजल, गृहहीनों के लिए आवास स्थान, ग्रामीण सम्पर्क सड़कें, प्रारम्भिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं, ग्रामीण विद्युतीकरण, नगरों में गन्दगी वाले क्षेत्रों का वातावरणीय सुधार, राज्य के खर्चे पर कुपोषितों के लिए पोषण जैसी कुछ बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करना है। आशा है, गरीबी की सीमा से नीचे वाले लोगों की जीवन की परिस्थितियों में इन सुविधाओं की व्यवस्था से काफी सुधार आएगा। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के लिए छठी योजना में 4180 करोड़ रुपये की व्यवस्था है जिसका ब्यौरा इस प्रकार है:—

क्रम सं०	योजना	परिव्यय रुपयों	करोड़ में
1.	प्रारम्भिक शिक्षा		900
2.	प्रौढ़ शिक्षा		200
3.	ग्रामीण स्वास्थ्य		490
4.	ग्रामीण जलपूर्ति		675
5.	ग्रामीण सड़कें		800
6.	ग्रामीण विद्युतीकरण		250
7.	भूमिहीनों के लिए आवासीय स्थल और ग्रामीण आवास		500
8.	गन्दगी वाले स्थानों में वातावरणीय सुधार		190
9.	पोषण कार्यक्रम		175
	कुल योग :		4180 करोड़ रु०

इन योजनाओं की प्रकृति और विषय वस्तु पर विचार करने से पता चलता है कि इनमें से दो योजनाओं से अधिकांश लाभ गरीबों को मिलेगा जबकि अन्य पांच योजनाओं से गरीबों को उतना ही लाभ पहुंचेगा जितना कि वे जनसंख्या के आधार पर पाने के हकदार हैं। इसके अलावा, दो योजनाओं से गरीबों को थोड़ा सा ही लाभ पहुंचेगा। भूमिहीनों के लिए आवासीय स्थल और शहरों के गन्दगी वाले क्षेत्रों में सफाई और वातावरणीय सुधार की व्यवस्थाएं पहली श्रेणी की योजनाओं में आती हैं। इन दोनों योजनाओं के लिए कुल 690 करोड़ रुपये की व्यवस्था है। यदि ये योजनाएं ठीक ढंग से लागू की जाएं तो उनका अधिकांश लाभ गरीब लोगों को मिल सकता है। इस श्रेणी में प्रारम्भिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, ग्रामीण स्वास्थ्य, ग्रामीण जलपूर्ति और पोषण कार्यक्रम की योजनाएं आती हैं। इन योजनाओं पर 2049 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे और इनसे सम्पूर्ण जनसंख्या को लाभ पहुंचेगा जबकि गरीबों को उनकी जनसंख्या के आधार पर जितना लाभ मिलना चाहिए उतना ही लाभ पहुंचेगा। मगर, अनुभव से ज्ञात होता है कि गरीबों को सामाजिक उपयोग की इन मदों में उचित लाभ नहीं मिल पाता। कारण स्पष्ट है कि प्राथमिक पाठशालाओं में गरीबों के बच्चों का प्रतिशत कम ही रहता है। प्राथमिक शिक्षा के मामले में गरीबी की सीमा से नीचे वाले लोगों के बच्चे तो और भी कम लाभ उठा पाते हैं। इसी तरह ग्रामीण स्वास्थ्य के मामले में भी गांवों के गरीबों को अपेक्षाकृत बहुत कम लाभ मिलता है क्योंकि समाज का अधिक प्रभावशाली वर्ग ही इस मद का अधिकांश लाभ हड़प जाता है। ग्रामीण जलपूर्ति और पोषण कार्यक्रम की भी यही स्थिति है। कभी-कभी तो यहां तक होता है कि अनुसूचित जनजातियों के लोगों को, जिनमें अधिकांश गरीबी की रेखा से नीचे होते हैं, सरकारी खर्च से बने हुए कुओं से पानी भी नहीं भरने दिया जाता।

तीसरी श्रेणी में आते हैं ग्रामीण विद्युतीकरण और ग्रामीण सड़कें। इन मदों पर 1050 करोड़ रुपये व्यय करने की व्यवस्था है। व्यावहारिक रूप से ग्रामीण विद्युतीकरण से गरीबों को कोई लाभ नहीं पहुंचता क्योंकि गरीब लोग खेती, उद्योग तथा घरेलू प्रकाश के लिए भी उसका उपयोग नहीं कर पाते। इसका लाभ गांव के समृद्ध वर्ग को ही मिलता है। वास्तव में विषमताएं कम करने के बजाए ग्रामीण विद्युतीकरण में धन लगाने से ग्रामीणों की आय और धन सम्पदा में विषमता ही बढ़ेगी। इसी तरह ग्रामीण सड़कों से भी समृद्ध किसानों को ही लाभ पहुंचता है क्योंकि वे सड़कों के माध्यम से अपनी फालतू कृषि उपज को बिक्री के लिए बाजार में ले जा सकते हैं और बाजार से अपनी आवश्यकता की वस्तुएं ला सकते हैं। ग्रामीण सड़कों से गरीबों को अधिक लाभ पहुंचाने की संभावना नहीं की जा सकती।

न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के ठीक तरह लागू होने से निःसन्देह गरीबों के जीवन में कुछ सुधार आएगा परन्तु यह समझना कि इस कार्यक्रम से गरीबी की रेखा से नीचे वाले लोगों के दारिद्र धुल जाएंगे, केवल दुराशा मात्र है।

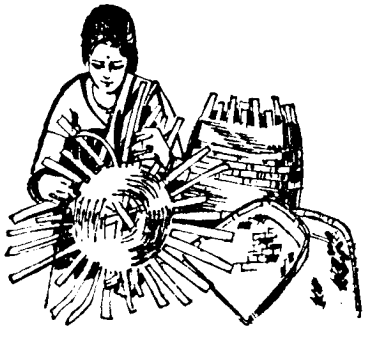

कुरुक्षेत्र

वर्ष 24 आषाढ़-श्रावण-1901 अंक 9

इस अंक में : **पृष्ठ संख्या**

भारतीय जनजातियों के विकास की सही दिशा 2
ब्रह्मदत्त दीक्षित

सहकारिता : नए दृष्टिकोण की आवश्यकता 4
ए० के० मजूमदार

ग्रामीण उद्योग धंधों को बढ़ावा देने से ही बेरोजगारी दूर होगी 6
रवीन्द्र कुमार भटनागर

भूमि को कैसे उर्वर बनाया जाए ? 8
महाराज

काम के बदले अनाज योजना से निर्माण का युग आरम्भ 9
के० पी० अरोरा

रेशम उद्योग-विकास की अपरिमित सम्भावनाएं 11
साधना गर्ग

बेसहारों का सहारा 'अन्त्योदय कार्यक्रम' 13
महेश चन्द्र शर्मा

अधिक अन्न उपजाओ 14
आजाद रामपुरी

जीवाणु और शस्य उर्वरता 15
शुकदेव प्रसाद

क्षेत्रीय विकास परियोजना से कृषि उत्पादन में दुगुनी वृद्धि 17
दुर्गा प्रकाद त्रिवेदी

मध्य प्रदेश में संरचना आधार सुविधाओं का विकास 19
महेन्द्र प्रताप सिंह

गरीबों का सच्चा साथी नारियल 20
श्रीमती लक्ष्मी चौहान

आधुनिक तीर्थ-व्यास सतलज संगम परियोजना 21
ब्रह्म प्रकाश गुप्त

गोबर गैस से गांव की काया पलट 22
महेश अग्रवाल

दहेज की समस्या--एक अपराध 26
ब्रज नारायण सिंह

साहित्य समीक्षा 28

पहला सुख निरोगी काया 30
डा० बी० पी० मिश्र एवं वैद्य रघुनन्दन प्रसाद साहू

कमजात (कहानी) 32
बाला शर्मा

भारतीय पशु-पक्षी 35
शकुन्तला धवन

कुरूक्षेत्र के बारे में पाठकों की राय 36

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो-ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि और सिंचाई मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे — वार्षिक चंदा 5.00 रु०

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : कु० शशि चावला
मोहन चन्द्र मन्टन

आवरण पृष्ठ : जीवन अडालजा

भारतीय जनजातियों के विकास की सही दिशा

* ब्रह्मदत्त दीक्षित

भारत वर्ष उन प्रमुख देशों में से एक ऐसा देश है जहां पर प्राचीन से प्राचीन व्यक्ति आज भी दृष्टिगोचर होता है और आधुनिक से आधुनिक व्यक्ति भी देखने को मिलता है। एक ओर विश्व की "चरवाहे युग की संस्कृति" और दूसरी ओर घोर-औद्योगिक नगरों की संस्कृति यहां उपलब्ध है। इसीलिए यहां की आर्थिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक समस्याएं विचित्र हैं। विश्व के आदि-युग का सही प्रतिनिधित्व करने वाली बस्तियां यहां कम नहीं है वरन् उनकी आबादी का अनुपात लगभग सात प्रतिशत है। ये आदि-वासी आज भी घने जंगलों तथा पर्वतीय जनपदों में बिखरे पड़े हैं। कुछ तो ऐसे हैं जिन्होंने आधुनिक नगरी सभ्यता के अभी तक दर्शन भी नहीं किए हैं। देश के सामान्य समाज से एकदम दूर और अनभिज्ञ। इन्हीं को देखकर आज से 25 वर्ष पूर्व डा० राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था "आज की प्रगतिशील बस्तियां उन बस्तियों को भी साथ लेकर आगे बढ़ें जो आदिवासी के नाम से जानी जाती हैं। अन्यथा वे पीछे से प्रगति का पैर खींच कर प्रगतिशीलों को निरन्तर 'पिछड़ा वर्ग' बनाती रहेंगी। समाज की इस दुर्बल कड़ी को हम छोड़ नहीं सकते।"

देश की आदिम बस्तियों की ओर सभी का ध्यान आजादी के आते-आते हो गया है। इन्हें संवैधानिक संरक्षण भी प्रदान किया गया है किन्तु आज तीस वर्ष पश्चात् भी हमारे प्रयत्नों की उपलब्धि संतोषजनक नहीं कही जा सकती है। इधर राजनैतिक क्षेत्र में वोट-बटोर जातियों को खोज का स्वार्थ जब से जगा है, तब से इन दीन, दुर्बल और शोषित जन जातियों की चर्चा अधिक होने लगी है। ये चर्चा और घोषणाएं प्रायः चुनाव तक ही सीमित रहती हैं अथवा राजनैतिक स्वार्थ सिद्ध करने का शिकार भर रहती हैं। ऐसे विकास क्रमों की रूपरेखा नहीं के बराबर है जो इन आदि-वासियों के समाज तथा सांस्कृतिक स्तर के अनुरूप हो और उन्हें स्वाभाविक गति से प्रगति की ओर बढ़ा सकें। वे आज भी सामान्य समाज के शोषित अंग बने हुए हैं। इतना ही नहीं वे अपनी उन प्राकृतिक उपलब्धियों से भी निरन्तर वंचित किए जा रहे हैं जो उन्हें सदियों से प्राप्त थी। वे आज उन जंगलों और पर्वत-पठारों के भी मुक्त विचरणशील मालिक नहीं रह पाएंगे जहां उनका निरन्तर वास रहा। जंगल और पठार प्रगति के नाम पर हड़पे जा रहे हैं अथवा स्वार्थ एवं शोषण के साधन बन गए हैं। हिमालय की तराई के जंगल "चिपको आन्दोलन" की भूमिका कैसे बना? अतएव भारतीय आदिवासियों की समस्याएं आज के सन्दर्भ में विशेष रूप से विचारणीय हैं इनकी उपेक्षा तथा बेतरतीब विकास की दिशा व देश के अभ्युदय के लिए श्रेयस्कर नहीं है।

भारत में आदिवासी बस्तियां प्रमुखतः निम्नांकित भौगोलिक क्षेत्रों में बसी हुई हैं :—

(1) उत्तर पूर्वी भारत:—उत्तर बंगाल, असम, नागालैण्ड, अरुणाचल, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा।

(2) मध्य भारत क्षेत्र :—उड़ीसा, बिहार, मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र।

(3) उत्तर पश्चिमी भारत :—उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, काश्मीर, राजस्थान।

(4) दक्षिणी भारत :—नीलगिरि पर्वत, धुर दक्षिण, तमिलनाडु।

उत्तर पूर्वी भारत में नागा, खासी, जारो, जयन्तिया, मिजो, कूकी, डामली, मिरिक, लुशाई, आया तानीज, मध्यभारत क्षेत्र में संथाल, उरांव, मुंडा, हो, विरहोर, सावरा, बोदो, खोंड, गोंड, शवर, मांड़िया, कोकू, कोटिया भील, बैगा, कमार; उत्तर पश्चिमी भारत में, खासा, नट, कोल, अंगारिया, भोकसा, कोरकवा, गद्दी, गूजर, मीना, कटकरी तथा दक्षिणी भारत में चेंचू, यनादी, टोडा, कोटा, वडगा, इरूला, पनिदान, उरालो, कदार, और पूर्वी द्वीप समूह में ओंज, जरावा जाति के आदिवासी रहते हैं। यद्यपि इन जन जातियों की संख्या अभी तक उपलब्ध गणना के अनुसार लगभग 212 है। किन्तु ऊपर प्रमुख जातियां ही गिनाई गई हैं।

सन् 1931 की जनगणना में भारतीय आदिवासियों की संख्या लगभग 2 करोड़ 20 लाख थी। सन् 1951 की जन गणना में 2 करोड़ 25 लाख, सन् 1961 की जन गणना में 2 करोड़ 98 लाख तथा सन् 1971 की जनगणना में इनकी संख्या 3 करोड़ 80 लाख, 15 हजार 162 अंकित की गई है। देश की कुल जन संख्या के अनुपात में यह 6.94 प्रतिशत है।

प्रायः सभी जन जातियों में अपने-अपने सामाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक संगठन हैं, जो अनादिकाल से चले आ रहे हैं और आज भी अपना दृढ़ अस्तित्व बनाए हुए हैं। इनका वर्णन यहां असंगत होगा किन्तु यदि उनके जीवन निर्वाह तथा व्यवस्था के साधनों का वर्गीकरण किया जाए तो निम्नांकित होगा :—

1. जंगल, पर्वत तथा पठारों में कन्द मूल संग्रहक।

2. जंगल, पर्वत तथा पठारों में तथा नदी एवं समुद्र में शिकार।

3. घुमक्कड़ी कृषक, पशुपालक तथा चरवाहे।

4. शिल्पी एवं औद्योगिक मजदूर।

यद्यपि कहा जाता है कि इनकी भाषाएं आर्य, द्रविड़, भारतीय, आस्ट्रिक, टीचीनी, तिब्बती, आदि के समीप है किन्तु भली प्रकार से देखा जाए तो इन सभी के पास अपनी-अपनी बोलियां हैं, लिपिबद्ध भाषाएं नहीं। इनकी बोलियों में लिपिबद्ध भाषाओं के समीपी शब्दों का प्रवाह अवश्य मिलता है। इनके जातिगत संस्कार, धर्म, सामाजिक तथा राजनैतिक संगठन भी विचित्र हैं जो परम्परागत आस्थाओं और मान्यताओं पर अवलम्बित हैं। प्रधानतया ये संगठन पुरातन जन-तांत्रिक आधार लिए हुए हैं। यहां पर तो केवल इनके जीवन-यापन की प्रमुख समस्याओं पर ही आज के संदर्भ में विचार करना अभीष्ट है।

लगभग सभी आदिवासियों के जीवन-यापन का कार्य-क्षेत्र जंगल, पहाड़, झील, पठार नदीतट तथा समुद्रीतट हैं। कतिपय औद्योगिक क्षेत्रों के मजदूर वर्ग को छोड़कर प्रायः सभी जनजातियां अपने पुरातन स्थलों से जुड़ी हुई हैं। समाजिक बिजली-करण की प्रक्रिया भी अभी तक इन्हें अलग-थलग नहीं कर पाई है। कभी-कभी वे विवशता से मजदूरी करने दूर-दूर तक निकलते अवश्य हैं किन्तु पुनः लौट कर अपने पुराने आवासों का मोह नहीं छोड़ पाते हैं। कहीं-कहीं नगरों के किनारे ये बस भी गए हैं किन्तु अपने परम्परागत जीवन के पुराने क्रम तथा सामाजिक संगठनों के प्रति अभी तक श्रद्धावान हैं। जीवन के पुराने नाते अभी भी इन्हें जीवन्त बनाए हुए हैं। वास्तव में इनके जीवन यापन की समस्याओं का समाधान भी इन्हीं के **आश्रय स्थलों से निकलना चाहिए। इनकी समृद्धि, प्रगति तथा जीवन विकास का साधन इन्हीं की जन्मभूमि प्रदान करे तभी सार्थक होगा। अपनी ही भूमि का पुत्र अपनी ही भूमि का मालिक बने यही**अभीष्ठ होना चाहिए। मनुष्य को एकाएक विस्थापित कर देना और उसके जीवन विकास में कतिपय व्यतिक्रम उत्पन्न कर देना प्रगति का लक्षण नहीं। इस संदर्भ में हमारे 30 वर्ष का आधुनिकतम प्रयोग असफल ही कहा जाएगा हमने गांव उजाड़ कर शहर बसाए। कस्बों को शहरों में परिणत कर दिया। बड़े शहरों को औद्योगिक क्षेत्रों में परिवर्तित किया। देश का सारा धन बटोर कर शहरी लोगों के इने-गिने समूहों में केन्द्रित किया। इससे परिणाम यह निकला कि देश के सारे शहर शोषण के अड्डे बने। विषमताएं उजागर हुईं। ग्रामों का उत्साही एवं साहसी वर्ग ग्रामों को छोड़ कर नगरों में आ इकट्ठा हुआ। भीड़ बढ़ी। दैनिक संघर्ष बढ़े। संकुचित साम्प्रदायिक वृत्तियों का उभार आया। धन की लिप्सा और स्वार्थ में मानव असद्-वृत्तियों का सहारा लेकर दानवता की ओर तेजी से बढ़ा। सहयोग और सहृदयता की भावनाएं नष्टप्राय हुईं अथवा इनके सन्दर्भ का अर्थ बदल गया। स्वार्थ में सहयोग और जीवन में वियोग का दृश्य उपस्थित हुआ। नैतिक मूल्य समाप्त हुए। सामाजिक गठन विनष्ट हुए। धीरे-धीरे प्राकृतिक वातावरण भी वायु-प्रदूषण, जल प्रदूषण, स्थल-प्रदूषण तथा नैतिक और सदाचार प्रदूषणों का शिकार हुआ। इन नवीन परिवर्तनों का समाचार इतना अधिक बना कि पुकार होने लगी "गांव की ओर लौटो" समस्याओं का समाधान न हो सका तो बुद्धि और विवेक ने निष्कर्ष निकाला कि अब सारी योजनाएं ग्राम की ओर उन्मुख हों। विगत 30 वर्षों के प्रयोग असफल हो रहे हैं। शहरों की घुटन ने जीवन को नीरस कर डाला है। भूमिपुत्र पुनः अपनी भूमि की ओर जाने को उत्सुक हैं और जाएगा भी। यही सुखद और सुविधाजनक भी होगा। इस जीवन दिशाबोध की भूमिका में आदिवासियों का भी समाधान खोजना चाहिए।

आदिवासियों की बस्तियां जिस भूमि को अपने आश्रयस्थल के से रूप में अपनाई हुई हैं और विशेष रूप से मोहासिक्त है वे स्थल **वन, पहाड़, नदीतट, पठार, डूंगर तथा समुद्री तट हैं।** देश को अभ्युदय की ओर ले जाने वाली विशाल और प्रगतिशील योजनाओं में इन उक्त स्थलों की असीम सम्पदा का प्रमुखतम स्थान है। लोहा, कोयला, तांबा तथा अन्य खनिज पदार्थ, तेल, पेट्रोल तथा अन्य द्रव वस्तुएं, कन्दमूल फलों की खेती का विकास एवं प्रसार, जलस्रोत तथा विद्युत् उत्पादन के साधन, नदी-नदों के बांध, जंगल की लकड़ी तथा अन्य जीवनोपयोगी संग्रहाक वस्तुओं का भंडार, सभी प्रकार के प्रदूषणों से बचने के लिए विश्वसनीय आश्रयस्थल, स्वास्थ्य-प्रद जीवन जीने के लिए प्रकृतिदत्त मुक्त विचरण स्थान, स्थलसेना, वायुसेना तथा जल सेना के निरापद आश्रयस्थल, हजारों और लाखों उद्योग-धन्धों, व्यवसायों एवं शिल्पों का संचित निधि-स्थान, कल-कारखानों, उन्नत कृषि को पनपाने वाले साधनों को प्रदान करने में सक्षम, आधुनिक औद्योगिक और तकनीकी जीवन के वरदान के स्थल तो यही हैं—**वन, पर्वत, नदीतट, पठार डूंगर तथा समुद्री तट।** इंगलैण्ड, फ्रांस जर्मनी, रूस, अमेरिका, कनाडा, जापान आदि संसार के सभी प्रगतिशील देशों ने उत्तम स्थलों का उपयुक्त उपयोग करके ही तो समस्त समृद्धि पाई है। वे तो **"महाजनो येन गतः स पन्था" का सिद्ध-प्रयोग है। इसमें गलती की संभावना** ही नहीं है।

तब पुनः देखिए कि भारत में जहां-जहां इन जनजातियों की बस्तियां बसी हुई हैं वहां-वहां ही घने और अविकसित जंगल, एवं वन, कौमार्य से युक्त पर्वत एवं पठार, निरन्तर सलिल वाहनी नदी, तथा अथाह समुद्र लहरा रहा है। ये स्थल प्राकृतिक संपदाओं की खान हैं। भारत के **उत्तर-पूर्व** में घने जंगल और पर्वत, कलकल करती निरन्तर बहती नदियां **मध्य भारत** में खनिजों की संपदा, विन्ध्य पर्वत की असीमित खनिज राशि, बनों की बहुल संपदा, उत्तर पश्चिम पूर्व के नदीनद, प्रकृतिदत्त स्वस्थ स्थल, हिमालय की अक्षय जलराशि तथा **दक्षिण भारत** में रत्नराशि लहराता समुद्र तट। अतएव भारत की अलौकिक संपदा का दर्शन तो इन्हीं उक्त स्थलों में किया **जा सकता है जहां पर बनवासी आदिवासी अपनी जन्म भूमि को सम्भाले बैठे हैं।** यह भी निर्विवाद है कि इन जन-जातियों में अदम्य साहस, घोर परिश्रम सच्ची लगन कार्य के प्रति अटूट श्रद्धा, नैतिक आदर्शों के प्रति आस्था और निष्ठा, वचन और संकल्प की प्रतिबद्धता तथा अपनी भूमि से जुड़े रहने की अटूट आकांक्षा जिस कोटि की है वह भारत की शेष आबादी से गुणात्मक स्तर में अपेक्षाकृत कहीं अधिक है। प्राकृतिक मानवीय गुणों से अभी ये रहित नहीं हुए हैं। जीवन को जीवन्तरूप से जीने की इच्छा इनमें प्रबल है। इनमें नैराश्य का नाम नहीं है। हतोत्साह होना तो अभी तक वे सीख नहीं पाए हैं। समाजगत तथा प्राकृतिक प्रदूषणों से वे सर्वथा मुक्त हैं। वे सत्ता और सम्पत्ति के विषाक्त नशे से अनभिज्ञ हैं। ऐसे जन बल के सहारे न केवल इनके जीवन का अभ्युदय संभव है वरन् समस्त देश की समृद्धि के ये सशक्त वाहक भी बन सकेंगे ऐसी आशा है

अतएव आवश्यकता है कि इन जन-जातियों के **जन-बल** का उपयोग उन्हीं की भूमि में, उन्ही के वातावरण में तथा उन्हीं के बनाए स्थलों में किया जाए जिसका पूर्णरूपेण लाभ उन्हें प्राप्त हो। उन्हें अपने

गौरवशाली भाग्य निर्माण का आभास हो। अभी तक इन जनजातियों को शहर और नगरों में बसाने के जो भी प्रयोग हुए हैं उनसे परिणाम यह निकला कि है :—इन जनजातियों का आर्थिक और, सामाजिक, राजनैतिक तथा नैतिक शोषण शहरी आबादी ने भरपूर रूप से किया है। इनकी समृद्धि के स्थान पर अपनी समृद्धि की है। महाजनों, तथा कथित प्रबुद्ध वर्ग तथा कुलीन कहे जाने वाले वर्गों ने इन्हें अपना शिकार बनाया है जिससे इनके जीवन स्तर का ह्रास ही हुआ है। इन्होंने अपनी मुक्त मस्ती खोई है। सैकड़ों और लाखों तो मूक प्राणी होने के नाते निरपराध होते हुए भी अपराधों में फंसाए गए हैं। इन लोगों को क्रीतदास ही समझा गया है। जहां पर सार्थक विलीनीकरण हुआ भी है वहां पर इनकी जाति का व्यक्ति दूसरे वर्ग में जा मिला है और उसने अपनी पुरानी विरासत छोड़ दी है। वह भी शोषकों की जाति का ही अंग बन गया है। इस प्रकरण में जनजाति को हानि अधिक हुई लाभ कम। दूसरों के घर में जाकर उसे न प्रतिष्ठा मिली और न आत्मसम्मान ही जीवन का सम्यक् स्तर तो तभी उठता है जब व्यक्ति अपने अर्जित आत्म सम्मान का अनुभव कर सके। यह अपने परिसर में ही संभव है। जो दूसरों की शरण में जाकर दास बनता है वह मुक्त मानव नहीं बन सकता। आत्मबोध ही उसे मुक्त मानव बनाता है।

अतएव भारत की जनजातियों को यदि उठाना है यदि उन्हें भौतिक संसाधनों से पुष्ट करना है तो उन्हें उसी परिसर का पूर्ण लाभ उठाने का अवसर प्रदान किया जाए। वन, पर्वत, पठार, नदीनद, समुद्र-तट को विकसित और समुचित उपयोग करने की जितनी भी योजनाएं हैं उनमें अबाध रूप से इनकी जनशक्ति का जाग्रत रूप से सदुपयोग हो। जाग्रत इस लिए कहा गया कि कहीं उनकी श्रम-शक्ति का शोषण ही होकर न रह जाए। उन्हें पल-पल पर अहसास होता चले कि वे अपनी पुरातन भूमि पर हैं जिसका विकास उनके भविष्य का विकास बन रहा है। वे ही उसके नियन्ता हैं और अपने भाग्य विधाता, सारा देश उनका है क्यों कि जिस परि सर का उपयोग वे कर रहे हैं उसी परिसर से सारा देश बना है। उनकी श्रमशक्ति भारत भर की असंख्य आत्माओं में व्याप्त है। एकात्मकता का भाव तभी साकार होगा। जनजातियों को विलीन नहीं करना है वरन् इन्हें देश की धरती के कण-कण में व्याप्त करना है। उनके अद्भुत जीवन का वरदान प्राप्त करना है। भारत के विकास और समृद्धिशील जीवन के उपादान उनके हाथ में हैं जिनका योग-दान भारत भर को मिलना है। यह दृष्टि ही सहकार की द्योतक बने।

आज शासन की अधिकांश विकास योजनाएं ग्रामों की ओर उन्मुख हो रही हैं जिससे ग्रामवासी अपनी ही भूमि पर टिक कर विकास के अवसर पा सकें तथा शहरी भीड़ कम की जा सके। तब तो यह और भी आवश्यक है और उपादेय होगा कि वनवासी जनजातियां जो अपनी पैत्रिक भूमि पर अभी भी टिकी हुई हैं उन्हें वहीं विकास और प्रगति के अवसर मिलें। इनके निवास स्थल तो विकास तथा समृद्धि के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं जो देश की अनुपम सम्पदा से भरपूर है।

31, गीता-वल्ली कालोनी,
आलमबाग, लखनऊ-5

सहकारिता : नए दृष्टि कोण की आवश्यकता

ए. के. मजुमदार

गत दशक में एक ठोस वितरण प्रणाली के अभाव में कृषि की विभिन्नता तथा उत्पादन में थोड़ा सा भी उतार-चढ़ाव मुद्रा स्फीति के भयंकर रूप में विकास की गाड़ी गति को रोक देने का कारण हुआ। वितरण प्रणाली में इधर कुछ प्रगति होने से शहरी क्षेत्रों में कुछेक वस्तुओं जैसे, चीनी, अनाज आदि के वितरण में कुछ स्थिरता आई है किन्तु बहुत से राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ताओं की आव-श्यकता की ओर अभी भी पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता है। इस कारण सरकार ने क्रमशः विकसित की जाने वाली एक ऐसी स्थायी वितरण प्रणाली कायम करने का निर्णय किया है, जिसमें राज्य तथा समाजोन्मुखी ऐजेन्सियां जन साधारण को उचित मूल्यों पर आवश्यक वस्तुएं सुलभ कराने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करें, साथ ही उत्पादकों को लाभ हो और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा भी हो। अतएव उत्पादन वितरण प्रणाली के विकास में सहकारी संस्थाओं एवं पंचायतों को प्रमुख रूप से शामिल करने की आव-श्यकता है।

मूल रूप से सहकारिताएं असंख्य संस्थाओं को समाप्त करना चाहती हैं, ताकि उत्पादक एवं उपभोक्ता कम खर्च में अपनी आवश्यकताएं पूरी कर सकें। ये कम तौल, वस्तुओं में मिलावट, जमाखोरी, कालाबाजारी तथा रैबेट न देने जैसे अवैध व अनुचित व्यापार प्रणालियों से भी उपभोक्ताओं की रक्षा करती है। अतएव उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं की सहकारी संस्थाएं उनके हितों की रक्षा के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है तथा वितरण प्रणाली में इनका मुख्य स्थान है। आमतौर पर इनका दोहरा लक्ष्य है। प्रथम सार्व-जनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत विक्रय की जाने वाली वस्तुओं के लिए एक अभिन्न अंग के रूप में काम करना तथा दूसरा अन्य वस्तुओं का खुले बाजार में प्रभावकारी ढंग से संचालन करना, जिससे बाजार की शक्तियों पर अनुकूल प्रभाव पड़े।

यह विचार किया गया है कि नई नीति के प्रतिमानों के अन्तर्गत उचित मूल्य की दुकानों की इस तरह वृद्धि की जाए कि प्रत्येक गांव या 2,000 से अधिक की आबादी वाले गांव के समूह में उचित मूल्य की एक दुकान अवश्य

हो। उपरोक्त लक्ष्य या संगठित ग्रामीण विकास के सहकारी लक्ष्य के संदर्भ में प्राथमिकता के आधार पर कुछ कार्य एवं कार्य योजनाएं अपनाना आवश्यक है। सभी पुनर्व्यवस्थित प्राथमिक ऋण समितियों को चाहिए कि आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण को अपना प्रमुख कार्य मानें। ऐसी 90 हजार प्राथमिक कृषि ऋण समितियां 5 वर्ष की अवधि में अपना कार्य शुरू करें। कृषकों को उपचार, विवाह तथा अन्य समारोह एवं शिक्षा तथा धार्मिक समारोह संबंधी ऋण उपलब्ध करना भी सहकारिताओं का उत्तरदायिव होगा। प्राथमिकता के आधार पर सहकारिताओं को उचित मूल्य की नई दुकानें उपलब्ध कराई जानी चाहिए। उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के बीच में सुदृढ़ संबंध कायम करने हेतु एक और सहकारी विपणन एवं संसाधन समिति तथा दूसरी ओर शहरी तथा ग्रामीण इलाकों में उपभोक्ता सामान का वितरण करने वाली सहकारी संस्थाओं में दीर्घ कालीन व्यापार का सहयोग होना चाहिए। पारस्परिक लाभ के लिए उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं में अन्तः सहकारी संबंध कायम होने चाहिएं।

यद्यपि पूर्ण बेरोजगार व्यक्तियों के सही-सही आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं तथापि अनुमान है कि इनकी संख्या लगभग तीन करोड़ है। ऐसी स्थिति में अनेक व्यक्तियों को सहकारी आर्थिक क्रियाओं में लगाकर रोजगार के अवसर दिए जा सकते हैं। सहकारिता के माध्यम से पूंजी के कम विनियोग पर भी अधिक लोगों को रोजगार मिलता है और उनकी आवश्थक स्थिति सुधरती है।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी के साथ-साथ अल्प बेरोजगारी और छिपी हुई बेरोजगारी की समस्या अधिक जटिल है ऐसे व्यक्तियों को चाहिए कि वे काम की आवश्यकता के अनुरूप सहकारी समितियों को संगठित करें। ग्रामों में उद्योगों को चालू करना चाहिए। सहकारिता के आधार पर चालू की गई खेती में भी अधिक व्यक्तियों को रोजगार दिया जा सकता है। इसके साथ ही गहन कृषि कार्यक्रम को अपनाने से भी मजदूरों की मांग बढ़ जाती है।

रोजगार के सन्दर्भ में बढ़ते हुए सहकारिता के क्षेत्र को अनेक भागों में बांटा जा सकता है। इनमें से प्रमुख क्षेत्र हैं:— कृषि एवं तत्संबंधी क्रियाएं, लघु सिंचाई योजनाएं, क्रय-विक्रय सहकारी समितियां, औद्योगिक सहकारी समितियां, प्रशोधन सहकारिताएं, उपभोक्ता सहकारिताएं, सहकारी गृह निर्माण समितियां, वन श्रमिक संस्थाएं और सहकारी विपणन। सहकारिता का क्षेत्र कृषि में ही सबसे अधिक है अतः इसके लिए सहकारी कृषि, सहकारी समितियों तथा कृषि सहकारी सेवा-संस्थाओं के विकास द्वारा रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। सहकारिता के आधार पर गांवों में सिंचाई एवं विद्युतीकरण किया जा सकता है। फलस्वरूप आर्थिक क्रियाएं बढ़ेंगी एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी। क्रय-विक्रय सहकारी समितियों द्वारा अपने गोदामों की संख्या में वृद्धि कर कृषि उपज को एकत्रित करते हुए किसानों को उनके फसल की अच्छी कीमत दिलाई जा सकती है तथा ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। औद्योगिक सहकारिताएं छोटे-छोटे दस्तकारों को रोजगार प्रदान कर सकती हैं। कुछ उत्पादक भी संगठित होकर ताड-गुड़ बनाने धान कूटने, तेल घानी लगाने, कपड़ा बुनने, साबुन बनाने, चमड़े का सामान बनाने के लघु उद्योग सहकारिता के आधार पर स्थापित कर सकते हैं। कृषि उपज को उपभोग के योग्य बनाने के लिए प्रशोधन सहकारिताओं द्वारा भी ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक लोगों को रोजगार मिल सकता है। इस तरह स्थापित चावल, चीनी के कारखाने और शीत भंडार रोजगार, प्रदान, करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गांवों में बिजली का सामान, पम्प-सेटों मोहरों, ट्रेक्टरों, स्पेयरों, डस्टरों आदि की मरम्मत हेतु सहकारी केन्द्र स्थापित किए जा सकते हैं। इससे बेकार तकनीकी लोगों को रोजगार मिलेगा। सहकारी गृह निर्माण, खेती तथा जंगल की कटाई आदि में भी मजदूरी के बहुत अवसर हैं।

रेल विभाग की सहकारी संस्थाएं

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह मिलजुल कर, एक समूह बनाकर रहता है। मनुष्य के इस स्वभाव पर ही 'सरकार' का तत्व निर्भर है। रेल मन्त्रालय ने इस बात को ध्यान में रखकर अपने कर्मचारियों के सहकारी संगठन बनाने के लिए प्रोत्साहन दिया है। रेल कर्मचारियों की ऋण उपभोक्ता और आवास की सहकारी समितियां हैं। उपभोक्ता सहकारी संस्थाओं द्वारा खोली गई उचित मूल्य की दुकान के लिए आसान किस्तों पर 10,000 रू० का ऋण दिया जाता है, जिस पर सूद की दर बहुत कम है। इसके अलावा, इन संस्थाओं के प्रबन्ध आदि के लिए पहले तीन वर्षों तक लागत की आधी राशि सहायता के रूप में दी जाती है। इन्हें इन दुकानों के लिए केवल एक रुपया वार्षिक किराए पर स्थान दिया जाता है तथा दूसरे सामान के लिए सस्ते किराए पर स्थान दिया जाता है। इन संस्थाओं की प्रबन्ध समितियों की बैठकों में भाग लेने वाले कर्मचारियों को विशेष यात्रा तथा छुट्टी दी जाती है। संस्था कर्मचारियों को भी यात्रा-भत्ता तथा रियायती टिकिट दिए जाते हैं। और उनके परिवार के लोगों को सीमित चिकित्सा सुविधाएं दी जाती हैं।

रेल प्रशासन द्वारा दी गई सुविधाएं और प्रोत्साहन के फलस्वरूप आज रेल कर्मचारियों की 450 पंजीकृत उपभोक्ता सहकारी संस्थाएं हैं। इनकी सदस्य संख्या 2,22,000 तथा शेयर पूंजी 44 लाख रु० से भी अधिक है। दस संस्थाएं 219 उचित मूल्य की दुकानें चलाती हैं जहां कर्मचारियों को सभी आवश्यक वस्तुएं सस्ती कीमत पर मिल जाती हैं। पिछले वर्ष इन सहकारी संस्थाओं ने जिनमें उपभोक्ता संस्थाएं भी शामिल हैं, 1361 करोड़ रुपये का कारोबार किया।

सचिव, नागरिक पूर्ति एवं सहकारिता विभाग

ग्रामीण उद्योग-धन्धों को बढ़ावा देने से ही बेरोजगारी दूर होगी

रवीन्द्रकुमार भटनागर

स्वतंत्रता से लेकर अबतक के देश के आर्थिक उतार चढ़ावों का यदि अध्ययन किया जाए तो आंकड़े काफी प्रभावकारी मिलते हैं। इसमें कोई संदेह भी नहीं है कि इस दौरान देश ने औद्योगिक और कृषि क्षेत्रों में समुचित उन्नति की है, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र अभी भी गरीबी की जकड़ में है। ग्रामीण कृषि क्षेत्र कुल राष्ट्रीय आमदनी में लगभग पचास प्रतिशत का योगदान देता है पर विकास का प्रभाव और दूसरी सुख सुविधाओं की प्राप्ति बड़े नगरों तक ही सीमित होकर रह गई हैं। आरम्भ से ही ग्रामीण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का आधार जहां एक ओर कृषि और पशु-पालन रहा है तो दूसरी ओर कपड़ा बुनना, चमड़े का काम, लोहे-लकड़ी का काम इत्यादि परंपरागत धंधे और व्यवसाय रहे हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक पहिया यदि कृषि क्षेत्र है तो दूसरा ग्रामीण उद्योग धंधे।

लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था

एक समय था जब प्रत्येक गांव अपने आप में एक संपूर्ण आर्थिक इकाई था। ग्राम वासियों की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति गांव में ही हो जाती थी। किन्तु आज एक विरोधाभास सामने आ रहा है। हालांकि गांव में संपन्नता बढ़ी है, फिर भी वहां गरीबी और बेकारी का आलम बरकरार है। बड़े कृषक ही आधुनिक कृषि तकनीकों से लाभान्वित हुए हैं। आज गांव में इतने धंधे नहीं हैं कि वहां के सभी नवयुवकों को काम मिल सके। ग्रामीण उद्योगों की वर्तमान स्थिति न के बराबर ही समझिए। आधुनिकता की दौड़ ने इस पहिए की हालत खस्ता कर दी है। कारण? एक तो मशीनीकरण और दूसरा बढ़ती हुई आबादी। भारी उद्योग धंधे केपिटल-इंटेंसिव हैं। इनमें पैसा तो खूब लगता है परन्तु लागत की तुलना में कम लोगों को ही रोजगार मिल पाता है।

भारी उद्योगों के विकास से राष्ट्रीय आर्थिक दशा तो सुधरी किन्तु परम्परागत ग्रामीण उद्योग चौपट हो गए। जुलाहे, बढ़ई, लुहार और चर्मकार आदि अनेक व्यवसाय ठप्प हो गए। आबादी बढ़ने से भी ग्रामीण क्षेत्र में बेकारी बढ़ी है। मशीनीकरण और जनसंख्या वृद्धि के प्रभाव से कृषि क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा है आधुनिक तकनीकों और अनुसंधानों के कारण कृषि उत्पादन आज से पचास साल पहले की तुलना में कई गुणा अधिक हो गया लेकिन बेकारों की बढ़ती हुई संख्या इस क्षेत्र में खप नहीं पा रही। एक तो जनसंख्या बढ़ने से खेती छोटी होती जा रही है और छोटे किसानों की अपनी ही गुजर मुश्किल से होती है फिर वे बेचारे खेत पर नौकर क्या रखें? बड़े कृषक या बड़े फार्म होल्डर ही कृषि की उन्नत तकनीकों का लाभ उठा पाए हैं। उनके आधुनिक कृषि उपकरणों और ट्रेक्टरों का उपयोग करने से इन फार्मों पर जो लोग मजदूरी किया करते थे वे बेकार हो गए। स्थिति यह है कि पेट पालने के लिए ग्रामीण परिवार अब शहरों की ओर आ रहे हैं जहां वे बेकार निम्न स्तर का जीवन यापन ही कर पाते हैं। इस निकाम में परंपरागत धंधों में लगे व्यक्तियों की संख्या ही अधिक है।

समाधान

गांवों में बढ़ती हुई बेकारी को दूर करने का एक ही रास्ता है और वह यह कि स्थानीय उपलब्ध स्रोतों और क्षमताओं का पूरा उपयोग किया जाए ताकि बेरोजगारों को वहीं काम मिल सके। ऐसे बहुत से लघु उद्योग हैं जो कृषि उत्पादन पर आधारित हैं। इनके अतिरिक्त दूसरे छोटे धंधे भी हैं जो वहां भलीभांति पनप सकते हैं।

ग्रामीण विकास की ओर अब काफी ध्यान दिया जा रहा है। मुख्य रूप से छोटे किसानों और ग्रामीण उद्योग धंधों की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। गांवों के लोगों का रुझान अधिकतर कृषि की ओर है। यदि इस रुझान को उद्योग धंधों की ओर मोड़ दिया जाए तो उसका बेकारी पर अत्यधिक प्रभाव पड़ेगा। गांव में बेकार जा रही मानव शक्ति को हम रचनात्मक कार्यों की ओर यदि मोड़ने में सफल हो जाएं तो बेकार जा रही मानवशक्ति सम्पत्ति बन सकती है और ग्रामीण क्षेत्र आर्थिक क्रियाशीलता का केन्द्र बिंदु बन सकते हैं।

विज्ञान ने शहरों में सभी सुख साधन जुटा दिए हैं लेकिन गांवों के लिए आधुनिक तकनीकी अपनी जटिलताओं के कारण बेकार ही सिद्ध हुई है। आवश्यकता ऐसी टैक्नॉलॉजी की है जो परंपरागत उद्योगों को बढ़ावा दे सके और उनके आर्थिक विकास में सहायक हो सकें। अच्छे सरल और सस्ते उपकरणों का विकास और स्थानीय उपलब्ध स्रोतों का पूरा उपयोग, उन पर आधारित उद्योग धंधे आदि वे क्षेत्र हैं जहां आधुनिक विज्ञान अपना योग दे सकता है। खाद्य पदार्थों और कृषि उत्पादन पर आधारित धंधे, ग्रामीण-सिविल इंजीनियरिंग, बढ़ई, लोहार, चर्मकारी आदि कार्य अनेक क्षेत्र हैं जहां विकसित टैक्नॉलॉजी के उपयोग की संभावनाएं हैं।

ग्रामीण धंधों के ठप्प होने का मुख्य

कारण यही था कि उनकी कार्यक्षमता बड़े उद्योगों की कार्यक्षमता से कहीं कम थी। ग्रामीण उद्योग धंधे तभी सफल हो सकते हैं जब वे आधुनिक बड़े उद्योगों के समान न सही तो बहुत अधिक पिछड़े भी न हों। इस कार्य को संपन्न करने के लिए आधुनिक तकनीकी ज्ञान का उपयोग आवश्यकतानुसार पुराने ग्रामीण उद्योगों की क्षमता बढ़ाने के लिए हो सकता है। जितनी जल्दी यह तकनीकी परिवर्तन आएगा उतनी ही जल्दी ग्रामीण क्षेत्र से गरीबी दूर होगी।

इन छोटे ग्रामीण उद्योगों की जहां तकनीकी समस्याओं को सुलझाने की जरूरत है वहीं उन्हें उचित आर्थिक आधार की भी आवश्यकता है। यातायात, संचार, बिजली, पानी आदि की मूल सुविधाओं के अलावा ऋण सुविधाएं और बने हुए माल का उचित पारिश्रमिक आदि ग्रामीण उद्योगों के पनपने के लिए अत्यन्त जरूरी हैं।

ग्रामीण और कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने के उद्देश्य के लिए सरकारी योजनाएं सामने आई हैं। इनमें एक है ग्रामीण बैंकों की स्थापना और दूसरी है जिला-उद्योग केन्द्र खोलना। ग्रामीण बैंकों और उद्योग केंद्रों की कार्य दशा अलग-अलग न हो कर एक ही है। दोनों के कार्य क्षेत्र गांव हैं और उद्देश्य है वहां आर्थिक क्रियाशीलता का विकास। अबतक देश में लगभग साठ ग्रामीण बैंकों की स्थापना की जा चुकी है। ये बैंक छोटे किसानों, खेतिहर मजदूरों और छोटे व्यवसायों में लगे ग्रामीणों को ऋण सुविधाएं देते हैं।

जिला उद्योग केंद्रों का कार्य जिले के ग्रामीण क्षेत्र के पारंपरिक उद्योगों को बढ़ावा देना है। नए उद्यमी को प्रोजेक्ट पर आने वाली लागत का केवल बीस प्रतिशत ही वहन करना होगा। शेष लागत बैंक से ऋण के रूप में प्राप्त हो सकती है। जिला उद्योग-केंद्रों को बैंक ऋण से उद्योग की स्थापना तकनीकी मशवरा और माल की बिक्री तक की सुविधाएं मुहय्या करने का काम सौंपा गया है। 30 अक्तूबर 1978 तक कुल 223 जिला-उद्योग केंद्र स्थापित हो चुके हैं। राजस्थान में ऐसे केंद्रों की स्थापना की जा चुकी है। हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में तीव्र गति से लघु उद्योगों की स्थापना की जा रही है। चालू वित्तीय वर्ष (1978-79) की अवधि में लगभग ढाई सौ उद्योग स्थापित किए जा चुके हैं और इस दिशा में प्रगति जारी है। पंजाब आगामी वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में 36000 लघुकृत उद्योग ईकाइयां स्थापित करने के लिए संकल्प है। इससे 1,20,000 व्यक्तियों को रोजगार मिलने की आशा है। हिमाचल प्रदेश में भी आठ जिला केंद्रों की स्थापना हो चुकी है।

ग्रामीण क्षेत्रों की बेकारी दूर करने का हल और उनकी आर्थिक उन्नति के लिए एक तरफा प्रयत्न ही काफी नहीं। ग्रामवासियों में भी इसके प्रति संवेदनशीलता आवश्यक है। अभी तक इनका किसी भी व्यवसाय करने का दृष्टिकोण परंपराओं पर निर्भर रहा है। व्यवसाय के चुनाव का आधार पैतृक न हो कर यदि आर्थिक दृष्टिकोण पर आधारित हो जाए तो मुश्किल काफी आसान हो सकती है। इससे कृषि क्षेत्र पर बढ़ रहे दबाव में भी कमी आएगी और उद्योग धंधे भी पनपेंगे। बेकारी कम होगी और ग्रामीण क्षेत्र आर्थिक विकास की ओर उन्मुख होंगे। ऐसे बहुत से धंधे है जो गांव में रहकर ही हो सकते हैं और उनसे मुनाफा भी काफी मिल सकता है।

यदि हम अपने गांवों के परंपरागत धंधों और अन्य ग्रामीण उद्योगों को विकसित करने में सफल हो जाएं तो ग्रामीण क्षेत्र आर्थिक विकास का केन्द्र बन सकते हैं। ●

विज्ञान अधिकारी, आकाशवाणी, दिल्ली
(क. न. 81 सी, ब्राडकास्टिंग हाउस)

कई वर्षों से हम निर्धन व गरीब को सहायता व राहत पहुंचाना चाहते हैं। परन्तु हमारी सहायता गरीबों तक पहुंच नहीं पाती। सहायता उन्हीं को पहुंचती है, जो सहायता की रस्साकशी में जोर लगाकर अपनी ओर खींच लेते हैं, सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के लाभ ग्रामीण समाज के ऊपर के लोगों तक ही रुके रह जाते हैं। जो वास्तव में जरूरत-मन्द हैं, उन निर्धनों तक नहीं पहुंच पाते। जरूरत है कि उन तक पहुंचे।

जब निर्धनों के प्रति करूणा न हो, जो भी सहायता ऊपर से आती है, चाहे वह कितनी ही कम या ज्यादा क्यों न हो, वह केवल ऊपर के लोगों तक ही सीमित रह जाती है।

"विनोबा जी"

भूमि को कैसे उर्वर बनाया जाए?

❀ महाराज

उपज का अधिक या कम होना भूमि की उर्वरता अथवा उपजाऊ शक्ति पर निर्भर है। यदि भूमि में उर्वरता अधिक है तो उपज अधिक होगी और यदि उर्वरता कम है तो उपज कम होगी। अतः अधिक उपज के लिए भूमि में अधिक उर्वरता का होना आवश्यक है।

उर्वरता ह्रास कारण

उर्वरक तत्व भूमि के ऊपरी या सतही भाग में होते हैं। वर्षा के समय इन तत्वों का बहुत कुछ भाग पानी-मिट्टी के साथ बह जाता है। इसीलिए ढालू या ऐसे खेतों में जिनका पानी बह जाता है, अपेक्षाकृत उपज कम होती है।

उर्वरक तत्व पौधों या फसल का भोजन होते हैं। दूसरे शब्दों में, हम खेत में जो फसल लेते हैं वह खेत की उर्वरता काफी कम कर देती है। इसी कारण जब हम एक फसल के बाद तुरन्त दूसरी फसल लेते हैं तो हमारी दूसरी फसल पहली की अपेक्षा कमजोर होती है।

केवल रासायनिक खादों अथवा उर्वरकों के लगातार प्रयोग से भूमि की उर्वरता नष्ट हो जाती है। पश्चिमी देश उर्वरकों के इस कुपरिणाम से भली भांति परिचित हैं। यहां पर हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि उर्वरकों का प्रयोग ही न किया जाय। अच्छी पैदावार के लिए उर्वरकों का प्रयोग अत्यावश्यक है, किन्तु जिन खेतों में उर्वरकों का प्रयोग करना हो, उनमें बोआई से पहले कम्पोस्ट अथवा गोबर की खाद डालना अनिवार्य है। उर्वरक उसी अवस्था में उर्वरता को हानि पहुंचाते हैं जब पूरक रूप में कम्पोस्ट या गोबर की खाद का प्रयोग नहीं किया जाता।

सिंचाई से भी उर्वरता का क्षय होता है। सिंचित भूमि में यदि खाद का प्रयोग न किया जाये तो फसल प्रति फसल उपज कम होती जाती है।

खरपतवार से भी उर्वरता प्रभावित होती है। फसल के पौधों की भांति खरपतवार के पौधे भी उर्वरक तत्वों को खाते हैं।

उर्वरता की रक्षा

यदि वर्षा का पानी खेत में ही रोक लिया जाए तो उर्वरक के तत्व बहने से बच जाएं। खेत का पानी खेत में रोकने से जहां भूमि की उपजाऊ शक्ति में कमी नहीं आती, वहां कई दूसरे लाभ भी होते हैं, यथा :

(1) भूमि का कटाव रुकता है।

(2) खेत में नमी बनी रहती है जिससे फसल अच्छी होती है।

(3) सिंचाई कम करनी पड़ती है।

(4) खेत का खरपतवार खेत में ही सड़कर खेत की उर्वरता को बढ़ाता है।

(5) इसका बाढ़ पर भी प्रभाव पड़ता है। खेतों का पानी खेतों में रुक जाने से नदियों में पानी कम पहुंचता है। यदि सभी किसान अपने खेतों का पानी खेतों में ही रोक लें तो जहां उनकी पैदावार बढ़ेगी, वहां वे देश को बाढ़ से बचाने में भी सहायक होंगे।

जिन खेतों की ऊपरी सतही मिट्टी बह जाती है उनकी एक प्रकार से जान ही निकल जाती है। खेत की मिट्टी ही किसान का धन है। यदि वह बह गई तो समझो किसान ही बह गया। खेत का पानी और खेत की मिट्टी खेत में ही रहे, इसके लिए हमें निम्नलिखित उपाय करने चाहिएं।

यदि खेत चौरस है तो हमें खेत के चारों ओर ऊंची मेंड़ बांध देनी चाहिए, जिससे बरसात का पानी खेत से बाहर न निकल सके।

यदि खेत ऊंचा नीचा है तो मेंड़ बांधने से पहले खेत की सतह एकसी कर लेनी चाहिए। यह काम हम मिट्टी खोदकर, मिट्टी डालकर, लकड़ी या हल का पटेला चलाकर अथवा 'बकस्क्रेपर' द्वारा कर सकते हैं।

यदि खेत ढालू है तो उसे दो या दो से अधिक भागों में बांटकर, ढाल की विपरीत दिशा में (यदि ढाल उत्तर-दक्षिण है तो पूर्व-पश्चिम और यदि ढाल पूर्व-पश्चिम है तो उत्तर-दक्षिण) बंधी डालनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि खेत के सारे पानी को एक जगह एक साथ न रोककर दो या दो से अधिक स्थान पर रोकना चाहिए। ऐसा करने से पानी के रोकने में आसानी होगी और खेत की मिट्टी कम बह पाएगी तथा बही हुई सारी मिट्टी एक जगह एकत्र न होगी।

ढालू खेतों में प्रायः ऊंचाई की ओर बंधी डालने की आवश्यकता नहीं होती। ऐसे खेतों में तीन ओर ही बंधी डालनी चाहिए तथा नीचे की ओर पानी को रोकने वाली बंधी काफी मजबूत होनी चाहिए। ऊंचाई की ओर बंधी तभी डालनी चाहिए, जब ऊपर के खेतों का इतना अधिक पानी खेत में आता हो कि उसे खेत में रोकना संभव न हो।

[शेष पृष्ठ 10 पर]

काम के बदले अनाज योजना से निर्माण का युग आरम्भ

ग्रामीणों द्वारा काम के बदले अनाज योजना के तहत सड़क निर्माण कार्य सम्पन्न किया जा रहा है।

अन्त्योदय योजना से जहां सबसे गरीब तबके के लोगों की आर्थिक दशा सुधारने के अनवरत प्रयास किए जा रहे हैं वहां दूसरी ओर मुख्य मंत्री श्री भैरोंसिंह शेखावत के सुसंचालन में चल रही 'काम के बदले अनाज योजना' के जरिए राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में निर्माण व विकास के युग का आरम्भ हुआ है।

केन्द्रीय सरकार के सौजन्य से प्रगति कर रही 'काम के बदले अनाज योजना' के तहत स्थायी सामुदायिक निर्माण कार्य करवाने के प्रयास किए जा रहे हैं। प्रदेश में यह योजना जनवरी 1978 को आरम्भ की गयी थी। योजना लागू करने का मुख्य उद्देश्य बेरोजगार ग्रामीणों को रोजगार देना तथा ग्रामीण अंचलों में सड़कें, लघु सिंचाई, वन, सामुदायिक विकास, जलप्रदाय, स्कूल भवन, पंचायत घर आदि के निर्माण व जीर्णोद्धार जैसे कार्यों को पूरा करता है।

इस योजना की यह भी विशेषता है कि योजना एवं गैर योजना गत मद के तहत सरकार जिन कार्यों को करा रही है उस पर बजट भार न पड़े व नए कार्य आसानी से शुरू कर लिये जाएं। मोटे तौर पर लगाए गए अनुमान के अनुसार एक लाख टन के उपयोग से कोई 11 करोड़ रुपए मूल्य की निर्माण क्षमताएं पैदा करने में यह कार्यक्रम सहायता करता है।

राजस्थान में यह कार्यक्रम पंचायतों के माध्यम से क्रियान्वित किया जा रहा है। उन्हें अधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से सरकार ने पूर्व में दी जाने वाली अनुदान राशि 25 पैसे से बढ़ाकर रु० 2.50 पैसे प्रति व्यक्ति कर दी है। इस निर्णय के अनुरूप सरकार ने 1977–78 को बाकी अनुदान राशि तथा प्रदेश के 26 जिलों की ग्राम पंचायतों को वितरित कर दी है। पूर्व में पंचायतों को केवल 2000/- रुपए तक की लागत वाले निर्माण कार्य आरम्भ करने के ही अधिकार प्राप्त थे।

के० पी० अरोरा

सरकार ने यह सीमा अब 5000/- रुपए करने के साथ साथ इतनी ही राशि के जन सहयोग देने की शर्त भी हटा दी है। अनुदान राशि का उपयोग निर्माण सामग्री के लिए तथा अनाज का उपयोग दैनिक मजदूरी के रूप में किया जा रहा है।

जनवरी 78 में जब इस योजना के अन्तर्गत राज्य में कार्य आरम्भ हुआ था तो केन्द्र ने केवल 6 हजार टन ही अनाज उपलब्ध कराया था। परन्तु सरकार ने पंचायतों के माध्यम से सामुदायिक निर्माण कार्यों की जिस प्रकार व्यूह रचना की, उसकी सफल क्रियान्विति देखते हुए केन्द्र सरकार ने 2.61 लाख मीट्रिक टन अनाज उपलब्ध करा दिया है।

1978–79 वर्ष में, इस योजना के तहत 35 करोड़ रुपए से भी अधिक की लागत के कोई 58235 निर्माण कार्य हाथ में लिए गए हैं, जिनमें से 40832 कार्य पूरे भी किए जा चुके हैं। शेष 17403 कार्य प्रगति पर हैं। सरकार ने 1,99,950 मीट्रिक टन खाद्यान्न का आवंटन विभिन्न जिलों के माध्यम से पंचायतों के लिए कर दिया है। पंचायतों ने मार्च 79 तक 1,97,406 मीट्रिक टन खाद्यान्न का उपयोग भी कर लिया है। माह जनवरी, 79 में इस योजना के तहत 98.09 लाख कार्य दिवस तथा फरवरी माह के दौरान रोजगार के दिवसों की संख्या 105.66 लाख रही तथा माह मार्च के दौरान रोजगार कार्य दिवसों की संख्या 115.84 लाख रही। अधिकृत रूप से यह भी बताया गया है कि भारत सरकार से जो गेहूं इस योजना के तहत अब तक उठाया गया है, इस संबंध में यह प्रदेश अन्य प्रदेशों की तुलना में अग्रणी है। ग्रामीण सड़कों के निर्माण का जो कार्य हुआ है, वह भी एक नया कीर्तिमान है।

राज्य सरकार ने इसके अतिरिक्त 27,410 मीट्रिक टन निर्माण विभाग को, 17,000 मीट्रिक टन सहायता विभाग को, 10,413 मीट्रिक टन सिंचाई विभाग को, 4,100 मीट्रिक टन जल प्रदाय विभाग को, 2500 मीट्रिक टन शिक्षा विभाग को, 2000 मीट्रिक टन वन विभाग को तथा 389 मीट्रिक टन चम्बल क्षेत्रीय विकास कोटा को इस योजना के तहत चल रहे कार्यों के लिए आवंटित किया था।

प्रदेश में 3051 शाला भवनों, 305 औषधालय भवन, 789 पंचायत घर, 4991 पेयजल कूप एवं डिग्गियां, 5675 सिंचाई तालाब, 8842 सड़कों के निर्माण कार्य पूरे किए जा चुके हैं तथा 4576 शाला भवन, 393 औषधालय, 1271 पंचायत घर, 2729 पेयजल कूप व डिग्गियां, 853 सिंचाई तालाब, 2226 ग्रामीण सड़कों के निर्माण कार्य प्रगति कर रहे हैं। योजना के तहत कुल 12052 किलो मीटर की लम्बाई में सड़कों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया गया था जिसमें से 9733 ग्रामीण सड़कों का निर्माण कार्य पूरा किया जा चुका है।

इसी योजना के तहत वन विभाग 3860 हैक्टर रकबे में वनों के पुनर्वास का कार्य सम्पादित करा रहा है। निर्माण विभाग के अधीन 3.67 करोड़ लागत के 71 सड़क निर्माण के कार्य प्रगति पर हैं। सिंचाई विभाग ने 6 लघु सिंचाई परियोजनाओं पर कार्य आरम्भ किया है। जिनके पूरा होने से 2456 एकड़ भूमि को अतिरिक्त सिंचाई सुविधा मिलने लगेगी। शिक्षा विभाग ने विभिन्न श्रेणी के स्कूल निर्माण के कार्य 1978–79 में हाथ में लिए थे, जिनमें से 79 लाख रुपए की लागत के कार्य पूरे कर लिए गए हैं।

ग्रामीणों द्वारा तालाब की खुदाई

वास्तव में वर्षों से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास जैसा सर्वोच्च महत्ता का कार्य आमतौर पर उपेक्षित रहा था परन्तु अब गांव-गांव में इन निर्माण कार्यों के आरम्भ होने से ग्रामीणों में एक नया उत्साह देखने को मिलता है। कहीं सड़क, कहीं स्कूल भवनों, कहीं औषधालय, अथवा कुंए के निर्माण से ग्रामीण भी इस विकासोन्मुखी कार्यक्रम के साझेदार बन गए हैं।

योजना की यह भी विशेषता रही है कि राज्य में उपलब्ध सभी बेरोजगार डिप्लोमाधारी इंजीनियरों को रोजगार सुविधा प्रदान कर दी गई है। ये अभियंता पंचायतों के निर्माण कार्य में महत्वपूर्ण तकनीकी योगदान दे रहे हैं।

राज्य सरकार ने इस कार्यक्रम को इस वित्तीय वर्ष में भी चालू रखने का निर्णय किया है।●

भूमि को कैसे उर्वर बनाया जाए (पृष्ठ 8 का शेषांश)

जिस खेत में पूरा पानी रोकना संभव न हो उसमें ढाल या नीचे की ओर के बांध में खेत की सतह से लगभग एक फुट की ऊंचाई पर पानी के निकास के लिए पक्की मोरी बनानी चाहिए।

भूमि की उर्वरता बढ़ाने का मुख्य उपाय खादों का प्रयोग है। इसलिए फसल बोने से पहले अपने खेतों में सही ढंग से तैयार की गई कम्पोस्ट या गोबर की खाद अवश्य डालनी चाहिए तथा रासायनिक खादों का भी उचित तरीके से प्रयोग करना चाहिए। हरी खाद भी उर्वरता बढ़ाती है, अतः उसका भी प्रयोग किया जाना चाहिए।

खरपतवार खेत की उर्वरता कम न कर सकें, इसके लिए आवश्यक है कि खेत में खरपतवार न होने दिए जाएं। यदि खेत में खरपतवार हों तो उन्हें मिट्टी पलटने वाले हल से जोतकर मिट्टी में दबा देना चाहिए। ऐसा करने से वे सड़कर खाद का काम करते हैं।

पैदावार बढ़ाने के लिए भूमि की उर्वरता का संरक्षण तथा संवर्द्धन अत्यावश्यक है और यह किसान के अपने हाथ की बात है।

महाराज
पो० आ० पवनी,
झांसी (उ० प्र०) 284204

रेशम उद्योग—विकास की अपरिमित सम्भावनाएं

साधना गर्ग

बंगलौर के 4 दिन के अन्तर्राष्ट्रीय रेशम सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर केन्द्रीय उद्योग मंत्री जार्ज फर्नान्डीज ने रेशम उत्पादन को अगले 5 वर्षों में दुगना करने की सरकारी योजना के बारे में अवगत कराया। वर्तमान में रेशम का उत्पादन लगभग 3,700 टन प्रति वर्ष है, जिसके 1982-83 तक 7,500 टन तक हो जाने की आशा है। इसमें कोई शक नहीं कि इस कृषि आश्रित उद्योग का वर्तमान परिस्थितियों में विशेष महत्व है और इसका तीव्रगति से विकास न केवल अधिकाधिक व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराएगा अपितु विनिमय उपलब्ध कराने में भी सहायक होगा। चूंकि प्रति एकड़ भूमि से रेशम का अन्य फसलों की तुलना में अधिक उत्पादन होता है इसलिए इस ओर अधिक ध्यान देने का भी औचित्य है। ऐसा माना जाता है कि जहां जूट के लिए 1 एकड़ भूमि से 3,837 रु०, धान से 4,056 रु० तथा गेहूं से 1,425 रु० के मूल्य के उत्पादन की प्राप्ति होती है वहां 1 एकड़ भूमि में रेशम के उत्पादन से 15,750 रुपये की प्राप्ति होती है।

रेशम उत्पादन तथा रेशम से बनी चीजें (मुख्यतः साड़ियां) भारत की गौरवमयी परम्परा रही हैं। रेशम की बनी बनारसी साड़ियां दुनिया भर में जानी जाती रही हैं। भारत के इतिहास में ढाके की मलमल और बनारसी साड़ियों की ख्याति में कमी केवल उस समय आई जब गौरांग प्रभुओं ने मैनचैस्टर और लंकाशायर की कपड़े की मिलों को बंद होने से बचाने के लिए कारीगरों के अंगूठे कटवा दिए। आज फिर बनारसी रेशमी साड़ियों का स्थान देश व विदेश के बाजारों में विशिष्ट बन गया है तथा रेशम के बने वस्त्र सम्पन्नता तथा गौरव के प्रतीक माने जाते हैं।

वर्तमान में रेशम उत्पादन भारत के 5.75 लाख गांवों में से 27 हजार गांवों में किया जाता है तथा इससे 38 लाख लोगों को रोजगार मिला हुआ है जिनमें 10 लाख से अधिक समाज के कमजोर व्यक्ति हैं। रेशम उत्पादन को किस्म की दृष्टि से मुख्यतया 2 भागों में बांटा जा सकता है—(1) शहतूती रेशम (2) गैर शहतूती रेशम। इन प्रमुख किस्मों को पुनः 3 सुनिश्चित भागों में विभक्त कर सकते हैं—(अ) कीट कोष (cocoon), (आ) कच्चा रेशम, तथा (इ) इसका गौण उत्पादन। शहतूती किस्म की रेशम का उत्पादन कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, जम्मू व कश्मीर, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश में होता है जहां आदिवासी जनसंख्या कम है। गैर शहतूती किस्म की रेशम (मूंगा, टसर तथा ऐरी) का उत्पादन बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा उत्तर-पूर्वी राज्यों में होता है जहां टसर का उत्पादन मुख्यतया बिहार, मध्य प्रदेश व पश्चिम बंगाल में होता है, वहां मूंगा के उत्पादन पर आसाम का एकाधिकार है। ऐरी भी अधिकतर आसाम में ही उत्पादित की जाती है। इन क्षेत्रों में रेशम के कीड़े पालने का कार्य आदिवासी तथा अन्य कमजोर वर्ग के व्यक्ति करते हैं। रेशम उत्पादन के इस कार्य को वृद्ध व अशक्त भी कर सकते हैं और यही कारण है कि इस कार्य में लगे 38 लाख व्यक्तियों में 30 प्रतिशत इस वर्ग से सम्बन्धित हैं। इसमें अधिक पूंजी विनियोग की भी आवश्यकता नहीं होती। मात्र 300—400 रुपये से कीड़े पालने का कार्य किया जा सकता है तथा विनियोग की तुलना में इसका प्रतिफल (प्राप्त आय) भी पर्याप्त रहता है। यह देखने में आया है कि पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक के किसानों ने क्रमशः जूट, कपास, अंगूर व गन्ने उत्पादन के परम्परागत पेशे को त्याग कर रेशम उत्पादन कार्य को स्वीकार किया है। निम्न तालिका द्वारा शहतूती तथा गैर शहतूती रेशम के उत्पादन को दर्शाया गया है :

तालिका (1)

भारत में रेशम का उत्पादन (टनों में)

वर्ष	शहतूती रेशम	गैर शहतूती रेशम	कुल
1972-73 .	2,215	570	2,785
1973-74 .	2,421	443	2,894
1974-75 .	2,434	558	2,992
1975-76 .	2,540	555	3,095
1976-77 .	2,650	580	3,230
1977-78 .	3,100	600	3,700
1978-79 (अनुमानित)	3,400	700	4,100
1982-83 (लक्ष्य)	—	—	7,500

स्रोत : 1972-73 से 1976-77—टाइम्स आफ इण्डिया डाइरेक्ट्री 1977-78 तथा 1982-83—इकानमिक टाइम्स—अक्टूबर 21, 1978

जैसा कि तालिका से स्पष्ट है रेशम का उत्पादन क्रमशः बढ़ता जा रहा है और उद्योग मंत्रालय द्वारा निर्धारित लक्ष्य (7,500 टन) 1982-83 तक प्राप्त हो सकेगा, ऐसी पूरी आशा है।

कच्चे रेशम तथा अपशेष (silk-waste) के अतिरिक्त भारत में प्रति वर्ष 81 टन काता हुआ रेशम का धागा तथा 106 टन क्षुद्रक धागा (noil yarn) पैदा होता है । इसके अतिरिक्त 100 टन प्रति वर्ष हाथ से काता हुआ धागा तैयार किया जाता है जिसका प्रयोग विकेन्द्रित क्षेत्र द्वारा विभिन्न किस्म की वसन-सामग्री बनाने के लिए किया जाता है।

विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है जो प्राकृतिक रेशम की चारों प्रमुख व्यावसायिक किस्मों (शहतूती, टसर, ऐरी, व मूंगा) का उत्पादन करता है। रेशम उत्पादन करने वाले देशों में भारत का पांचवा स्थान (चीन, जापान, दक्षिण कोरिया, ब्राजील तथा इटली के पश्चात्) है यद्यपि शहतूती रेशम के कुल विश्व उत्पादन में भारत का अंश मात्र 5 प्रतिशत है, तथापि टसर रेशम के मामले में भारत का स्थान चीन के बाद आता है और यदि हम 'सुनहरी मूंगा' रेशम को लें तो इसमें भारत का लगभग एकाधिकार है।

निर्यात

रेशम के निर्यात की दृष्टि से भारत ने तीव्र गति से प्रगति की है। 1971 में जहां हमारे कुल निर्यात 7.54 करोड़ रुपये के थे वे अब 1977-78 में बढ़कर 30 करोड़ से भी आगे निकल गए हैं। रेशम की वस्तुओं तथा रेशम अपशिष्ट को हम मुख्य रूप से संयुक्त राज्य अमरीका, फ्रांस, पश्चिम जर्मनी, इंग्लैण्ड, सिंगापुर, स्विट्जरलैण्ड, स्वीडन आदि देशों के लिए करते हैं । विश्व बाजार में रेशम की मांग बढ़ती जा रही है। इधर जापान ने, जो अब तक विश्व में निर्यात व्यापार में अग्रणी था, रेशम बाजार से अपना हाथ खींच लिया है। यह अवसर है कि जापान के साथ मिलकर अपने रेशम उद्योग को वैज्ञानिक पद्धति पर विकसित कर सकते हैं। दरअसल अभी तक हमारी रेशम उगाने की तथा वस्त्र बनाने की पुरानी तकनीक है जिसके आधुनिकीकरण की आवश्यकता है।

रेशम उद्योग की वर्तमान आवश्यकता कच्चे रेशम तथा रेशमी वस्त्रों गुणक्ता की ओर अधिक ध्यान देना है जिसे वर्तमान तकनीक में सुधार द्वारा लाया जा सकता है। दूसरी ओर रेशम उत्पादन केन्द्रों को रेशम के कीड़ों के अंडों की पर्याप्त पूर्ति भी करनी होगी। कीड़ों के पालन-पोषण के स्तर को भी सुधारना होगा ताकि रेशम के कीड़ों की विनाशता को रोका जा सके। विपणन की व्यवस्था भी संस्थात्मक बनानी होगी तथा कच्चे रेशम के मूल्य में स्थायित्व लाना होगा। रेशम उद्योग का भविष्य उज्जवल है इसमें कोई शक नहीं, लेकिन इसके विकास के लिए एकीकृत नीति को अपनाना होगा ताकि न केवल अधिक से अधिक लोगों को रोजगार दिया जा सके अपितु अधिकाधिक विदेशी विनिमय भी अर्जित हो सके।●

साधना गर्ग,
आर-339, सिविल लाइन्स,
भरतपुर (राजस्थान) ।

ग्राम विकास कार्यकर्त्ताओं से अनुरोध

हमारे गांव के लोग अब जग उठे हैं और तरह-तरह की जानकारी के भूखे हैं । वे अपनी खेतीबाड़ी तथा अन्य ग्रामीण विकास कार्यों के सम्बन्ध में ज्यादा से ज्यादा और जल्दी से जल्दी जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं । उनकी इस रुचि को ध्यान में रखकर श्री वेनी कृष्ण शर्मा (संयुक्त सचिव, ग्राम विकास विभाग कृषि और सिंचाई मंत्रालय, नई दिल्ली), के एक लेख का 'आफ प्रिंट' खण्ड विकास अधिकारियों, ग्राम सेवकों, पंचायती राज-अधिकारियों तथा प्रधानों आदि के पास भेजा जा रहा है जिसका शीर्षक है 'गांवों में पूर्ण रोजगार का कार्यक्रम' ।

गांवों में पूर्णतया बेरोजगारी दूर करने के हेतु सरकार द्वारा जो प्रयास किए जा रहे हैं, उनके बारे में चार पृष्ठ के इस लेख से ग्राम-वासियों को पर्याप्त जानकारी उपलब्ध होगी । खण्ड विकास अधिकारियों, ग्राम सेवकों, पंचायती राज-अधिकारियों तथा पंचायतों के प्रधानों से अतः हमारा अनुरोध है कि यदि जानकारी का यह माध्यम उनके लिए उपयोगी हो तो वे हमें अपने विचारों से अवगत कर कृतार्थ करें। **"सम्पादक"**

बेसहारों का सहारा

"अन्त्योदय-कार्यक्रम"

महेश चन्द्र शर्मा

गत तीन वर्षों में विकास की संचालित योजनाओं के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले भूमिहीन व्यक्ति, लघु/सीमान्त कृषकों व आर्थिक दृष्टि से निर्बल वर्ग को अपेक्षाकृत यथेष्ट लाभ नहीं पहुंचा है। निर्धन वर्ग के व्यक्तियों के रहन सहन में भी अभीष्ट परिवर्तन नहीं आ पाया है तथा उसकी आर्थिक स्थिति में भी कोई सुधार नहीं हुआ है। इसीलिए शासन ने यह निर्णय लिया है कि विकास योजनाओं का अत्यधिक लाभ ग्रामीण क्षेत्र के निर्धन परिवारों को मिलना चाहिए। इसी उद्देश्य से शासन ने स्थानीय विकास योजनाओं का श्रीगणेश किया है, जिसमें अन्त्योदय योजना को प्रमुख महत्व दिया गया है। गरीबों को ऊपर उठाने का यह अभिनव कार्यक्रम चुनौतियों से भरा है। देश भर में गरीबी के अन्धकार में डूबे हुए अनेकानेक व्यक्ति इस 'अन्त्योदय' सरीखी उजली रेखा की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहे हैं।

अन्त्योदय योजना का अर्थ है समाज के सबसे पिछड़े और पद्दलित तथा आर्थिक दृष्टि से सबसे अन्त में आने वाले व्यक्तियों को सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से ऊंचा उठाकर उनका विकास करना। अन्त्योदय योजना का उद्देश्य प्रत्येक गांव के गरीब से गरीब परिवारों को ऐसी सहायता देना है जिससे वे गरीबी के दानव से मुक्त होकर मानव गरिमा के अनुरूप अपना जीवन-यापन कर सकें तथा यह भी अनुभव कर सकें कि उनका भी समाज में अपना कोई स्थान है। अतः बेसहारों का सहारा अन्त्योदय योजना है।

सीधी-सादी सी बात पंच-परमश्वर के न्याय की पुरानी याद। गांव-गांव में सभा का आयोजन,, जिसमें सभी वर्ग के लोग तथा जन प्रतिनिधियों की उपस्थिति, इस खली पंचायत बैठक में गांव के सबसे निर्धनतम पांच परिवारों का चयन। कोई गिला नहीं, शिकवा नहीं, पक्षपात की शिकायत नहीं, बशर्ते कि सभी पक्षों की जागरुकता कायम रहे। फिर इन चयनित परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने और समाज में समानता लाने के लिए ही शुरु की गई है यह अन्त्योदय योजना। अतः अन्त्योदाय कार्यक्रम निर्धन, उपेक्षित परिवारों को आर्थिक सहायता देने का कार्यक्रम है, जिन्हें आजतक विकास कार्यक्रमों का कोई लाभ नहीं हुआ है। इस का अर्थ इस प्रकार है, आर्थिक सीढ़ी के अंतिम व्यक्ति का विकास।

उत्तर प्रदेश में जनता सरकार ने नियोजन प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण करके स्थानिक विकास नियोजन कार्यक्रम के माध्यम से यह संकल्प किया है कि गांव की आर्थिक पंक्ति के अंतिम व्यक्ति का विकास किया जाये जिसे अब तक विकास योजनाओं का लाभ नहीं मिल पाया है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वतंत्रता के युद्ध के बाद उत्तर प्रदेश में प्रथम-बार गरीबी से लड़ाई का कार्यक्रम युद्ध स्तर पर 2 अक्तूबर 1978 से प्रारम्भ किया गया है।

अन्त्योदय कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक गांव से पांच सर्वाधिक निर्धन परिवारों का चयन किया जायेगा। इस प्रकार चयनित किए गए सर्वाधिक निर्धन परिवारों के आर्थिक उत्थान के लिए प्राथमिकता के आधार पर समूचे राज्य में समयबद्ध प्रयास द्वारा कार्यक्रम के निश्चित लक्ष्य प्राप्त किए जाने हैं। दिनांक 29-7-78 के विधायी परिशिष्ट में प्रकाशित स्थानिक विकास योजना के अधीन जिला परिषद् ऋण नियमावली 1978 के नियम 2 (ख) के अनुसार "अन्त्योदय परिवार का तात्पर्य ग्रामों में रहने वाले ऐसे निम्न कुटम्ब से है, जिसका गांव सभा की नियमित बैठक में सर्वसम्मति से चयन निम्न प्राथमिकता के आधार पर किया जाना है"

1. वे परिवार जिनके पास न तो भूमि है, नाही पशुधन और ना ही स्थायी आय का कोई साधन है।

2. जिन कुटुम्बों के पास स्रोतों/मजदूरी, से सकल आय 2000/- रु० से अधिक न हो।

3. अन्य परिवार, जिनके पास सिंचित भूमि की दशा में 0.404 हैक्टेयर और असिंचित भूमि की दशा में 1.00 हैक्टेयर, पशुधन या साधन है परन्तु वह निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करते हैं।

निर्धारित चयन प्रणाली के अनुसार ग्रामसेवक, पंचायत सेवक के सहयोग से गांव सभा की बैठक बुलाकर गांव के सबसे निर्धन-तम परिवारों का चयन करेंगे। चयन के समय ही ऐसे निर्धन परिवारों को ग्रामसभा की बैठक मे बुलाकर प्रत्येक परिवार की आय के साधनों के सम्बन्ध में विचार किया जाएगा तथा सूची को अंतिम रूप दिया जायेगा। चयनित परिवारों के सम्बन्ध में निर्धारित प्रपत्र (परिशिष्ट-I) के अनुसार उन्हें अस्थायी परिचय पत्र दिया जाएगा। इसी बैठक में इन परिवारों के आर्थिक उत्थान के लिये प्रस्तुत वांछित सम्भावित सबसे उपयुक्त सहायता पर भी विचार किया जायेगा। ग्रामसेवक यह सूचना एकत्रित कर अपनी सम्मति के साथ सम्बन्धित खंड विकास अधिकारी को ऋण व्यवस्था हेतु भेजेंगे।

अन्त्योदय योजना के अन्तर्गत चयनित परिवार को बिना किसी प्रतिभूति (जमानत) के 5000/- (पांच हजार) तक का ऋण निम्न योजनाओं पर दिया जा सकता है। यह ऋण नगद न होकर उस वस्तु के रूप में दिया जाएगा, जिसके लिए ऋण मांगा जा रहा है तथा वह वस्तुएं अन्त्योदय परिवार द्वारा ऋण चुकाने तक बंधक के रूप मेंरखनी होगी। इसके अतिरिक्त आर्थिक सहायता के क्षेत्र को बढ़ाने की दृष्टि से अन्त्योदय परिवार द्वारा प्राप्त ऋण पर 50% (1/2) की अनुदान राशि दी जा सकती है तथा प्रदत्त ऋण पर 4 रु०प्रतिशत ब्याज की दर से 8 वर्ष में समान किस्तों में वसूली की जाएगी और पहले वर्ष वसूली न कर अनुदान नगद न देकर अन्त्योदय परिवार के खाता में ही चुकता कर दिया जाएगा।

योजनाओं की सूची

1. कृषि उत्पादन जिसमें औद्योगिक तथा फार्म शामिल हैं।
2. कृषि विकास और भूमि संरक्षण।
3. लघु सिंचाई।

4. पशुपालन, डेरी विकास तथा मत्स्य पालन ।

5. चरागाह विकास ।

6. ग्रामीण कुटीर एवं लघु उद्योग ।

7. जल निकास

8. राज्य सरकार द्वारा निर्दिष्ट अन्य कोई प्रयोजना ।

इस प्रकार अन्त्योदय परिवार को किसी भी ऐसे उत्पादक रोजगार के लिए ऋण दिया जा सकता है, जिससे वह अपनी रोजी रोटी कमा सके । इसके लिए पशुपालन के अन्तर्गत भैंस, गाय, बकरी अथवा सुअर पालन, कुटीर उद्योग के अन्तर्गत लोहार गिरी, चमड़े का काम, कपड़ा बुनने का काम इत्यादि कृषि यंत्र के अन्तर्गत हल, डनलप गाड़ी (बुग्गी) इत्यादि बनाना तथा मरम्मत कार्य, गांव से सड़कों तक कृषि उपज ले जाने के लिये इक्का, रिक्शा, डंलप गाड़ी आदि के लिये, तथा सिलाई मशीन, चमड़े की सिलाई मशीन, बान बंटने की मशीन अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकेगी

खंड विकास अधिकारी ग्रामसभा स्तर पर सभी ग्रामों व उनमें चयनित अन्त्योदय परिवारों की सूचना निर्धारित प्रपत्र में ग्रामसेवक के माध्यम से संकलित करेंगे तथा वह अन्त्योदय परिवारों से ऋण/अनुदान के प्रार्थनापत्र ग्रामसेवक के माध्यम से तैयार कराएंगे तथा उन्हें अनुदान स्वीकृति हेतु जिला परिषद् के मुख्य अधिकारी के पास अपनी संस्तुति सहित भेजेंगे । इस प्रकार अन्त्योदय परिवारों को कहीं भाग दौड़ की आवश्यकता नहीं पड़ेगी तथा केवल अपने क्षेत्रों के ग्राम-सेवक, पंचायतसेवक तथा खंड विकास अधिकारी से ही सम्पर्क करना होगा ।

अन्त्योदय योजना को सफल बनाने हेतु विशेषरूप से इस बात पर बल देना होगा कि निर्धनतम परिवारों का सामयिक एवं ठीक ढंग से चयन हो तथा चयनित परिवारों के आर्थिक उत्थान के लिए उपयोगी योजना का निर्माण एवं उसे क्रियान्वित किया जाए और इन अन्त्योदय परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार की मात्रा का अध्ययन एवं समय समय पर प्रकट होने वाली कठिनाइयों का निराकरण किया जाए । यदि अन्त्योदय योजना के अन्तर्गत परिवारों का चयन गावों की दलगत राजनीति की दलदल में फंसा रहा ऋण व्यवस्था को दुर्गम एवं गढ़ बनाया गया, तथा सही दिशा कार्यान्वियन नहीं किया गया तो घनी और घनी, गरीब और गरीब', होने के क्रम को और बल मिलेगा और गरीबी का निवारण फिर भी एक अधूरा स्वप्न ही बना रहेगा ।

इस प्रकार से गरीबी से मुक्ति की एक व्यावहारिक योजना के रूप में अन्त्योदय कार्य-क्रम के द्वारा पूज्य बापू के दरिद्रनारायण की सेवा की कल्पना साकार हो सकेगी और गांव की आर्थिक पंक्ति के अंतिम व्यक्ति की समृद्धि का अन्त्योदय योजना का बृहद् लक्ष्य पूर्ण हो सकेगा । गरीबी से जूझने वालों के लिये यह योजना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम है, जिससे निश्चय ही दरिद्रनारायण का उत्थान होगा । इस प्रकार अन्त्योदय योजना बेसहारों का सहारा है तथा इस योजना से निर्बल वर्ग के लोगों को काम धंधा मिलेगा तथा उनकी गरीबी की धुंध छंट जाएगी ।●

प्रसार प्रशासिण अधिकारी
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र
गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार)

अधिक अन्न उपजाओ

आजाद रामपुरी

अधिक अन्न उपजाओ भैया, अधिक अन्न उपजाओ ।
शस्य-श्यामला धरती भैया, श्रम से उसे सजाओ।।
अधिक अन्न उपजाओ ।

साहस-खुरपा लिए हाथ में, जीवन-खेत निराओ ।
बल-पौरुष-हल लिए साथ में, कर्म-बीज बो जाओ ।।

बड़ी उर्वरा भूमि-जिंदगी, निष्ठा सम हरियाली ।
सतत् साधना-जल सिंचन कर ज्यों बगिया को माली ।।

क्रियाशील दो पग हाथों से, मंगल-वाद्य बजाओ ।
अधिक अन्न उपजाओ ।।

मस्त बहारें पुरवैया की, नव उमंग ले आए ।
जो जितना खोजेगा भू पर, वह उतना पा जाए ।।
आलसहीन चेतना तन की रिमझिम सुख बरसाए ।
सुखद घटायें, मन-मयूर भी नाचे, तन हरषाए ।।
सब समर्थ इस भू के सुत हैं, महिमा नहीं लजाओ ।
अधिक अन्न उपजाओ ।।

ज्यों-ज्यों श्रम होगा खेतों में, त्यों-त्यों प्रगति करेंगे ।
हो अम्बार नाज और फल का, विपदा सभी हरेंगे।।
ग्राम बनेंगे सुख-कोषालय, महके गली-गली ।
विघ्न-सिंधु के पार लगें जब धीरज—नाव चली ।।
निशदिन पुलक-पुलक हिय सुख की, वंशी मधुर बजाओ ।

अधिक अन्न उपजाओ ।।

※

जीवाणु और शस्य उर्वरता

शुकदेव प्रसाद

भूमि में जैविक पदार्थों तथा नाइट्रोजन वृद्धि के लिए हरी खाद की महत्ता अर्से से वैज्ञानिकों, कृषकों को मालूम है। हरी खाद से पोषक तत्व शीघ्र ही आगामी फसल को उपलब्ध होते हैं। कुछ दलहनी फसल यदि हरी खाद के लिए प्रयुक्त की जाएं तो वे विशिष्ट महत्व की हो सकती हैं जैसे ढेचा, सनई, मूंग, उरद, नील आदि। रबी की कटाई के पश्चात् ये बोई जा सकती हैं और खरीफ की फसल बोने से पूर्व पलट कर अच्छी हरी खाद तैयार की जा सकती है ?

क्या पौधे क्या जन्तु; दोनों में तमाम बीमारियां जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होती हैं। लेकिन जीवाणु के हानिकारक पक्ष के साथ ही एक पक्ष और भी है और वह यह कि जीवाणु हमारे मित्र भी हैं। हम जीवाणुओं के मैत्री की चर्चा कृषि के संदर्भ में करेंगे।

ज्ञातव्य है कि नाइट्रोजन पौधों की वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक तत्व है। एक वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार एक हैक्टेयर क्षेत्र वायुमंडल में लगभग 80,000 टन नाइट्रोजन होती है लेकिन वायु की इस स्वतन्त्र नाइट्रोजन का उपयोग कोई भी जन्तु या पौधा सीधे नहीं कर सकता। इस विकट समस्या का समाधान प्रस्तुत करते हैं कुछ जीवाणु मित्र।

यदि आप दलहनी फसलों की जड़ों को ध्यान से देखें तो पता लगेगा कि उनकी जड़ों पर छोटी-छोटी गांठों जैसी ग्रन्थियां पाई जाती हैं जिन्हें नोड्यूल (nodule) कहते हैं। इन्हीं ग्रन्थियों में हजारों की संख्या में एक विशिष्ट प्रकार के जीवाणु; राइजोबियम भरे होते हैं जो वायुमंडल की स्वतन्त्र नाइट्रोजन को नाइट्रोजन यौगिकों में परिवर्तित कर देते हैं जिसका पौधे उपयोग करते हैं। इस प्रकार ये जीवाणु दलहनी पौधों में नाइट्रोजन की मात्रा में आवश्यक वृद्धि करते हैं।

यदि जीवाणु दलहनी फसलों को नाइट्रोजन प्रदान करते हैं तो ये उन्हें बदले में प्रदान करती हैं उनके रहने के लिए सुरक्षित स्थान और पोषण के लिए भोज्य पदार्थ आदि। इस प्रकार जीवाणु और पौधे एक दूसरे को लाभान्वित करते हुए साथ-साथ रहते हैं। जीवाणुओं और पौधों की इस दोस्ती को वैज्ञानिकों ने सहजीवन की संज्ञा दी है।

हमारे किसान इस वैज्ञानिक तथ्य को जानते हैं कि जब कोई दलहनी फसल बोई जाती है तो इन्हीं जीवाणुओं के कारण उस खेत की उर्वरता शीघ्र बढ़ जाती है और पुनः दूसरी फसल बोने पर अच्छी पैदावार होती है

ये राइजोबियम जीवाणु दलहनी फसलों में नाइट्रोजन की अभिवृद्धि तो करते हैं साथ ही इन फसलों के मिट्टी में जोते जाने पर ये नाइट्रोजन मुक्त करते हैं जिससे अन्य फसलें लाभान्वित हो सकती हैं। परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि सनई से 90 किलो, लोबिया से 70 किलो, सोयाबीन से 60 किलो०, मसूर से 105 किलो०, बरसीम से 120 किलो०, तथा अरहर से 140 किलो० प्रति हैक्टेयर नाइट्रोजन की अभिवृद्धि होती है

ग्रन्थियों का निर्माण

सर्व प्रथम फ्रांसीसी रसायनज्ञ जे० बी० बोसिंगोल्ट ने 1838 में अपने फार्म में दलहनी पसलों का निरीक्षण किया। उसने देखा कि फसलों के काट लेने पर भूमि में नाइट्रोजन की प्रतिशत मात्रा बढ़ जाती है। लेकिन वह इस का कारण न बता सके।

आगे चल कर विलफार्थ तथा हेलरी गेल ने ज्ञात किया कि नाइट्रोजन वृद्धि का कारण दलहनी फसलों की जड़ों में पाई जा वाली ग्रन्थियां हैं। बाद में वैज्ञानिक बेरिक ने बताया कि इन में जीवाणु पाए जाते हैं जो नाइट्रोजन स्थिर करते हैं।

तालिका 1 : विभिन्न दलहनी फसलों में पाए जाने वाले जीवाणु

जीवाणु	फसलें
1 राइजोबियम मेलीलोटी	अल्फा अल्फा (रिजका)
2. राइजोबियम ट्राइफोलाई	क्लोवर (तिपतिया)
3. राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम	मटर, चना, मसूर
4. राइजोबियम फोसिओलाई	बीन
5. राइजोबियम जैपोनिकम	सोयाबीन
6. राइजोबियम ल्यूपिनाइ	वर्षीय एवं बहुवर्षीय ल्यूपिन
7. राइजोबियम काउपी	लोबिया, मूंगफली, ग्वार
8. राइजोबियम लोटस	कमल

तालिका 2—विभिन्न दलहनी फसलों में नाइट्रोजन द्वारा स्थिर की गई मात्रा

फसलें	नाइट्रोजन की स्थिर की गई मात्रा (कि० ग्रा० /हैक्टेयर)
अल्फा अल्फा	125—127
स्वीट क्लोवर	130
व्हाइट क्लोवर	132
मटर	62—115
बीन	45
सोयाबीन	57
ब्लू ल्यूपिन	208
लोबिया	62—128
अलसी	114
मूंगफली	46

1880 में वैज्ञानिक फ्रैंके ने इन जीवाणुओं का नामकरण किया राइजोबियम जीवाणु।

यह भी ज्ञात हुआ कि राइजोबियम जीवाणुओं की कई जातियां होती हैं और प्रत्येक जाति किसी खास दलहनी फसल में ग्रन्थियां बनाती है (देखिए तालिका-1) दलहनी फसलों को काटकर पुनः उसी खेत में यदि दूसरी दलहनी फसल बोई जाए तो वह उतनी अच्छी फसल नहीं साबित होती क्योंकि जीवाणु अपनी विशिष्टता के कारण दूसरी फसल ग्रन्थियां नहीं बना पाते।

मार्शल वार्ड (1887) तथा फ्रैंक (1890) ने बताया कि ग्रन्थियों का निर्माण संदूषण प्रक्रिया द्वारा होता है। वास्तव में होता यह है कि ये जीवाणु भूमि में पहले से ही उपस्थित होते हैं और जब कोई दलहनी पौधा उगता है तो जीवाणुओं की विशिष्ट जातियां उसके मूलरोमों द्वारा जहां ये प्रवेश कर जाती है और इनकी अधिकता के कारण स्थान-स्थान पर जड़ें फूलकर गांठों में परिवर्तित हो जाती हैं। इन्हीं गांठों में ये जीवाणु रहते है, जड़ों से ही अपना पोषण प्राप्त करते हैं तथा बदले में वायु की स्वतन्त्र नाइट्रोजन को स्थिर कर पौधों को प्रदान करते हैं। किसी दलहनी पौधों में कितनी ग्रन्थियां बन सकती हैं, यह राइजोबियम जीवाणुओं की संख्या पर निर्भर करता है। सामान्यतः प्रतिघन सेंटीमीटर के लिए कम से कम दस लाख से एक अरब तक जीवाणुओं की आवश्यकता होती है।

राइजोबियम कृषि

कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रत्येक दलहनी फसल की उचित वृद्धि के लिए उसकी जड़ों में विशिष्ट प्रकार के जीवाणुओं का होना अत्यन्त आवश्यक है। कभी कभी ऐसा होता है कि कुछ जीवाणुभोजी (बैक्टीरियोफेज) तथा कवक परजीवी भूमि में।

तालिका 3—कुछ फसलों पर कल्चर के प्रयोग का प्रभाव (क्षेत्र परीक्षण, च० आ० कृ० वि० वि०, कानपुर)

फसलें	उपचार	दानों की उपज (कि०/हैक्टेयर)	सामान्य फसल तुलना प्रतिशत	की में वृद्धि
उरद	बिना कलचर	1775		—
	कलचर सहित	1950		10
सोयाबीन	बिना कलचर	950		—
	कलचर सहित	1088		15
लोबिया	बिना कलचर	1650		—
	कलचर सहित	1775		7

रहनेवाले इन राइजोबियम जीवाणुओं को नष्ट कर देते हैं जिससे इनका अभाव हो जाता है। वैसे भी कभी-कभी राइजोबियम जीवाणुओं की भूमि में कमी होती है। स्पष्ट है कि कम जीवाणुओं के होते पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन नहीं स्थिर हो सकती है। अतः आवश्यक है कि भूमि में कृत्रिम जीवाणु पहुंचाए जाएं जिससे पर्याप्त ग्रन्थियों का निर्माण हो सके जो उन दलहनी फसलों के लिए उपयुक्त मात्रा में नाइट्रोजन प्रदान करें तथा साथ ही आने वाली फसल के लिए भूमि की उर्वरता भी बढ़ावें।

भूमि में कृत्रिम जीवाणु पहुंचाने की रीति मृदा-निवेशन (सॉयल इनोकुलेशन) कहलाती है। इसके लिए राइजोबियम कल्चर तैयार किए जाते हैं जो दलहनी फसलों के बोते समय ही उनमें मिला दिए जाते हैं जिससे कल्चर वाले जीवाणु ही समय पर भूमि में पहुंच कर ग्रन्थियों का निर्माण कर सकें।

राइजोबियम कल्चर वायुमंडल की नाइट्रोजन स्थिर करने का सबसे आसान और सस्ता तरीका है। जबलपुर कृषि विश्वविद्यालय में मूंग तथा मूंगफली पर राइजोबियम कल्चर परीक्षण से प्रति हैक्टेयर प्रति फसल 80—150 किलो० नाइट्रोजन वृद्धि रिकार्ड की गई है। अभी विशेष रूप से सोयाबीन तथा बरसीम की फसलों में राइजोबियम कल्चर के प्रयोग हुए हैं जिससे इस दिशा में आशा की सफलताएं नजर आयी हैं। कृषि विश्वविद्यालय कानपुर में परीक्षण भी अच्छे परिणाम प्रदर्शित करते हैं (देखिए—तालिका 3)।

राइजोबियम कल्चर प्रयोग के कई लाभ हैं—एक तो यह बहुत सस्ती तकनीक है। कल्चर के एक पैकेट का मूल्य 2 रुपये तक होता है जो 10 किलो० बीज के लिए पर्याप्त होता है। राइजोबियम कल्चर के प्रयोग से उपज में 10—15 प्र० श० की वृद्धि होती पाई गई है। कल्चर के प्रयोग के बाद भूमि में अलग से नाइट्रोजन उर्वरक डालने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती।

राइजोबियम कल्चरों की महत्ता अब किसान समझ चुके हैं, इसी नाते इन की खपत दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, गोविंद वल्लभ पन्त वि० वि० पंतनगर; चन्द्रशेखर आजाद कृषि वि० वि०, कानपुर; जवाहर लाल नेहरू वि०वि० जबलपुर; बैक्टोजिन लेबोरेटरीज, जबलपुर तथा वायो फर्टिलाइजर्स, बम्बई आदि व्यापारिक स्तर पर राइजोबियम कल्चर तयार करते हैं। किसानों को चाहिए वे कल्चर का प्रयोग कर भरपूर फसल का लाभ उठाये।

बीज बोने से पहले बीजों को कल्चर से उपचारित करना आवश्यक है। इसके लिए पहले गुड़ का घोल (120 ग्राम प्रति लीटर पानी में) तैयार करें तथा आधे घण्टे तक उबाल कर ठण्डा करलें। अब राइजोबियम कल्चर को स्वच्छ पानी में घोल लें और फिर उसे गुड़ वाले घोल में मिलाएं। अब दलहनी फसलों के जिस बीज को भी बोना है, उसे उपयुक्त घोल से मिलाएं। तत्पश्चात् बीजों को थोड़ी देर तक छाया में सुखाएं और 48 घंटे के अन्दर बीज को बो दें। आप देखेंगे कि बीजों पर लगे राइजोबियम जीवाणु उन की जड़ों में पर्याप्त मात्रा में गांठें (नोड्यूल) बनाएंगे जिससे उचित मात्रा में नाइट्रोजन स्थिर होगी। ●

संपादक, 'विज्ञान भारती,' 34, एलनगंज
इलाहाबाद-211002

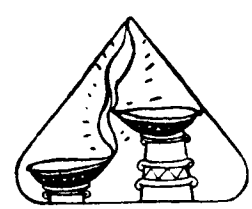

दीप से दीप जले

क्षेत्रीय विकास परियोजना से कृषि उत्पादन में दुगुनी वृद्धि

दुर्गाशंकर त्रिवेदी

किसानों की समस्याओं के लिए वर्षों से जूझते रहने वाले प्रगतिशील किसान खेड़ा रसूलपुर के जन नेता गजानन्द जी वर्मा से उस दिन किसानों की कई समस्याएं सुनकर बरबस ही उभरी हुई कड़ुवाहट के बीच जब मैंने कहा :– "गजानन्दजी ! क्षेत्रीय विकास परियोजनाओं की सफल क्रियान्विति से कुछ तो बदलाव आया ही होगा न !"

'हां आया क्यों नहीं ? जिसने मेहनत की, योजनाओं के लाभ उठाने की पहल की, कृषि विभाग के विस्तार कार्यकर्ताओं की राय मानी वहां उत्पादित अन्न ने उनकी तकदीर ही बदल डाली है । कहीं-कहीं तो अब दुगने से और किसी-किसी के यहां तीन गुना तक उत्पादन होने लगा है । खेतों में खारीपन आने, पानी की वजह से खरपतवार के बढ़ने आदि की समस्याओं पर रोक लगने लगी तो किसानों में नई उम्मीदें जाग उठीं ! निराशा आने लगी थी, वह मिट गई ।'

नई समस्याएं उभरीं

राजस्थान के हाड़ौती अंचल (कोटा, बूंदी व सवाई माधोपुर के कुछ क्षेत्र) तथा मध्य प्रदेश के कुछ जिलों में चम्बल नदी पर बांध बांध कर उसके अल्हड़ पानी की सिंचाई के लिए, उत्पादन बढ़ाने व औद्योकीकरण के लिए विद्युत उत्पादन हेतु 1954 से ही प्रयत्न शुरू कर दिए गए थे। 1960 में कोटा बैराज से दो मुख्य नहरों द्वारा सिंचाई हेतु अटूट जल राशि उपलब्ध करा दी गई थी। युगों से प्यासी धरती पानी पीकर हरित क्रान्ति को सफलीभूत करने लगी। पर कुछ ही वर्षों तक विपुल उत्पादन देकर इन नहरों ने किसानों के सामने नई समस्याओं का पहाड़ खड़ा करना शुरू कर दिया था।

इन नहरों के द्वारा सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध करवाने के पश्चात् यह आशा की जाती थी कि इस क्षत्र के कृषि उत्पादन में अत्यधिक बढ़ोत्तरी हो सकेगी। पर यह बढ़ोत्तरी का दौर एकाएक डगमगाने लगा । किसानों की आशाएं फलीभूत नहीं हो सकी ! इसके विपरीत सिंचाई और भूमि के बदलाव सम्बन्धी कई नई समस्याएं तेजी से उभरने लगीं।

नहरों के पानी का रिसाव होने लगा जिससे मच्छरों का प्रकोप, सड़ांध व नमी बढ़ी। जल भराव होने लगा। जलोत्सरण व्यवस्थाओं का पर्याप्त मात्रा में न होना, भूमि की क्षारीयता में बढ़ोत्तरी, जलीय खर-पतवारों की वजह से नहरी क्षमताओं में कमी होना आदि के साथ-साथ नहरी पानी से खारीपन भूमि में बढ़ने लगा। नतीजा यह हुआ कि प्रति वर्ष कृषि उत्पादनों में कमी आने लगीं। खारीपन कहीं-कहीं तो इतनी तेजी से बढ़ा कि अधिकांश खेती करने योग्य भूमि में ऊसरिता की स्थितियां बढ़ने लगी। किसानों में एक अजीब तरह की आशंका उठने लगी ! तत्कालीन चम्बल विकास आयुक्त श्री लालवानी व कृषि अधिकारियों ने इस सारी स्थिति का मौके पर जाकर अध्ययन किया व सरकार को स्थिति से आगाह किया गया।

ऐसी नई उभरी समस्याओं के प्रति राज्य सरकार का चिन्तित होना स्वाभाविक ही था ! विश्व बैंक परियोजना के अधिकारियों ने तभी राज्य सरकार के आग्रह पर एक व्यावहारिक प्रतिवेदन मौके की जांच करके तैयार किया। राज्य-प्रशासन ने उसे स्वीकृति दी और जून 1974 से इन नई समस्याओं से टकराने का एक सघन अभियान शुरू किया गया। इन परियोजना कार्यों के अन्तर्गत 6 वर्षों में नहरों को पक्का करवाना, जलोत्सरण की उचित व्यवस्था, सड़कों का निर्माण, भूमि सुधार, क्षारीय भूमि में बदलाव लाने के प्रयत्न आदि के लिए 73.20 करोड़ रुपये व्यय करने का लक्ष्य है। इस राशि में 41.60 करोड़ रुपये विश्व बैंक परियोजनाओं द्वारा उपलब्ध करवाए जाने का प्रावधान प्रस्तावित है।

एक चर्चा के दौरान वर्तमान विकास आयुक्त श्री यतीन्द्रसिंह जी ने इसे व्यावहारिक रूप से क्षेत्र के प्रति विश्व बैंक को सहानुभूतिपूर्ण पहल बतलाया। क्योंकि, ये समस्याएं आगे चलकर विकराल रूप धारण करने की स्थिति में आ ही गई थीं।

चम्बल परियोजना का कुल क्षेत्रफल इस समय 4,85,000 हैक्टेयर है। इसमें सिचाई के योग्य क्षेत्रफल 2,29,000 हैक्टेयर, कन्दराओं का क्षेत्रफल 72,980, लिफ्ट सिंचाई सिस्टम से सिंचाई करने योग्य क्षेत्र 40, 340 हैक्टेयर व शेष कृषि की दृष्टि से अयोग्य सा है। 60 हजार से अधिक किसान परिवार इसके अन्तर्गत 746 ग्रामों में निवास करते हैं। फिलहाल भूमि विकास एवं अन्य कुछ सुधार परियोजनाएं कोटा व बूंदी जिले की कुल 6 पंचायत समितियों में काम कर रही हैं। काम को व्यावहारिक भाव-भूमि के अनुरूप योजनाबद्ध तरीके से चलाया गया है, इस लिए किसानों के प्रति प्रतिबद्ध रहकर वे उनका विश्वास जीतने में सफल हो पाए हैं।

लक्ष्य पूर्ति पर निगाह

चम्बल विकास परियोजना के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों पर यदि विचार किया जाए तो अभी तक जो कुछ भी हो चुका है, वह कम नहीं है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उसने किसानों के मन में बसे हुए भय को उखाड़ फेंका है। अन्यथा किसान परेशान हो उठा था कि वह कहीं बर्बाद ही न हो जाए यह है हरित क्रान्ति का आशियाना।

नहर पक्की करने के 1980 तक के लिए प्रस्तावित 21 किलोमीटर पक्की की जाने वाली नहर में से 15.40 कि० मी० नहर पक्की की जा चुकी है। नहरी क्षमता का लक्ष्य 854 कि० मी० तय किया गया था जिसमें से 664.30 कि० मी० तक पहुंचा दिया गया है। इससे सिंचाई के रकबे में पर्याप्त वृद्धि सम्भव हुई है।

नहरी पानी को नियंत्रित करने के उद्देश्य से 157 केन्द्रों का लक्ष्य बनाया गया था, उसमें से 72 बन चुके हैं तथा 32 प्रतिशत जलीय खर पतवार को नियंत्रित किया गया है। इसी प्रकार 2 लाख 30 हजार हैक्टेयर की जलोत्सरण योजना में से 2 लाख से अधिक हैक्टेयर का सर्वेक्षण हो चुका है। करीब 16 हजार हैक्टेयर से अधिक में जलोत्सरण योजना लागू कर दी गई है। 87 हजार हैक्टेयर में जलोत्सरण योजनाएं चल रही हैं। भूमि सुधार कार्यक्रमों के अन्तर्गत 47 हजार सर्वेक्षणों में से 34 हजार हैक्टेयरों का सर्वेक्षण हो चुका है। 19 हजार हैक्टेयरों में काम पूरा किया जा चुका है। 7 हजार में निर्माण कार्य चालू है। सड़क निर्माण के 200 कि० मी० के लक्ष्य में से 175 कि० मी० सड़कें बनाई जा चुकी हैं तथा एक हजार हैक्टेयर में वृक्षारोपण करके लक्ष्य प्राप्त किए जा चुके हैं।

कृषि विस्तार कार्यों में पहल

नवीनतम कृषि विस्तार कार्यक्रम भी किसानों के लिए शुरू किया गया है। उद्देश्य यह रक्खा गया है कि किसान नई तकनीकें अपनाकर विद्युत्, उर्वरक, उन्नत बीज व सिंचाई के साधनों का व्यवस्थित उपयोग करके खेतों की औसत उपज बढ़ा लें। ग्राम विस्तार कार्यकर्ता किसानों से सम्पर्क करके उनकी समस्याओं को देख सुनकर उनके निराकरण की पहल करते हैं।

इसी परियोजना का एक आवश्यक व महत्वपूर्ण अंग है, भूमि विकास कार्यक्रम। किसानों की सहमति से उनकी जरूरतों के लिए आवश्यक धन मुहैय्या करवाने के लिए ऋण शिविर आयोजित किए जाते हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंक कोटा के प्रशासक एवं जिलाधीश श्री पी० एन० भण्डारी तथा भूमि विकास बैंक कोटा के प्रशासक अतिरिक्त जिलाधीश श्री आमकरण अग्रवाल की सूझ-बूझ, व्यक्तिगत दिलचस्पी और सहयोगी रुख से ये ऋण शिविर बहुत सफल रहे हैं। ये शिविर वे देहातों में ही लगाकर मौके पर ही सारी कार्यवाहियां करते हैं। इससे किसानों की परेशानियों को समझने व निपटाने में बड़ी सफलता मिली है। ये शिविर इतने सफल हुए हैं कि कई प्रान्तों की सरकारों ने श्री भण्डारी को उनके यहां ऐसे शिविरों का आयोजन करवाने को आमंत्रित किया है। भारत सरकार के फिल्म्स डिवीजन ने इन शिविरों पर एक फीचर फिल्म भी तैयार करवाई है। प्रधान मंत्री श्री मोरारजी भाई देसाई तक ने अन्त्योदय व ऋण शिविरों की कोटा यात्रा में तारीफ की थी।

इस प्रकार क्षेत्रीय विकास परियोजनाओं ने हाड़ौती अंचल का इतिहास ही नहीं भूगोल तक बदल डाला है। उत्पादन बढ़ा तो किसान की आर्थिक हालत भी सुधरी है। ✱

दैनिक सोसलिस्ट समाचार
मकबरा बाजार,
पोस्ट आफिस कोटा-3240006
(राजस्थान)

हर धार से निर्मल है गंगा

जमील "हापुड़ी"

हर नूर से रोशन है सूरज,
हर धार से निर्मल है गंगा।
दुनिया का अजूबा है भारत,
भारत का मनोबल है गंगा॥
खेतों ने पुकारा इसको जहां,
पहुंची है वहां लहराती हुई।
इस देश के प्यासे पौधों पर,
अमृत के घड़े छलकाती हुई॥
शिवजी के गले में लटके हुए,
सांपों से भी चंचल है गंगा॥
दिन रात उगाती है फसलें,
ऋतुओं के भाग्य जगाती है।
कहीं पुष्प खिलाती है दिल के,
कहीं मन की तपन बुझाती है।
जो बारहों मास बरसता है,
धरती पे बादल है गंगा॥
इस प्यार की एक कहानी से,
सारा जग हक्का-बक्का है।
आवाज ने इन दो साजों की,
गीतों को अमर कर रक्खा है।
इक हाथ की बंसी है जमना,
एक पांव की पायल है गंगा॥
संसार के रेगिस्तानों में,
पानी को तरसती हैं रूहें।
भारत में जनम लेने के लिए,
सदियों से तरसती हैं रूहें।
पूजा है जिसे अवतारों ने,
उस प्यार का आंचल है गंगा॥

मध्यप्रदेश में संरचना आधार सुविधाओं का विकास

महेन्द्र प्रताप सिंह

मध्य प्रदेश भारत के मध्य में स्थित होने के कारण अपने नाम को चरितार्थ करता है। यह भारत का सबसे बड़ा राज्य है, न केवल विस्तार अपितु प्राकृतिक सम्पदा की दृष्टि से भी यह देश में सबसे अधिक समृद्ध है। किन्तु विशेषता यह है कि अभी इन साधनों का दोहन नहीं हो पाया है। विगत 28 वर्षों से नियोजित विकास प्रयत्नों के बाद भी मध्य-प्रदेश की आर्थिक सामाजिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। राज्य की प्रमुख समस्या उत्पादकता (कृषि एवं उद्योग) में वृद्धि लाने के साथ-साथ आर्थिक सामाजिक संरचना में भी मौलिक परिवर्तन लाने की हैं ताकि आर्थिक क्रियाओं का तेजी से विकास किया जा सके।

जब 1957 में मध्यप्रदेश का पुनगर्ठन किया गया था, तब यह आशा की गई थी कि राज्य का अधोरचनात्मक विकास तेजी से होगा, विकास हेतु प्रदेश में सभी साधन हैं किन्तु नियोजित ढंग से विकास कार्यों को प्रारम्भ नहीं किया गया। आज 20 वर्षों बाद भी ऐसे मूल्यांकन की आवश्यकता महसूस की जा रही है। 4 लाख 43 हजार वर्ग कि० मी० में फैले राज्य के 4 करोड़ 16 लाख निवासियों के कल्याण के लिए कहां तक प्रयत्न किए हैं तथा उनमें कहां तक सफलता मिल सकी है ?

सिंचाई

सन् 1932 में 2 प्रमुख 14 मध्यम तथा 30 गौण सिंचाई योजनाएं बनीं जिनमें, 8,10,000 एकड़ भूमि पर सिंचाई सम्भव हुई किन्तु प्रथम योजना के प्रारम्भ होते ही इस दिशा में काफी प्रगति हुई और 890 हजार हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई होने लगी। द्वितीय योजना काल में इस क्षेत्र में और प्रगति की एवं सिंचाई क्षेत्र बढ़ कर 926 लाख हेक्टेयर हो गया जो तृतीय योजनाकाल के अन्त में 1078 लाख हेक्टेयर हो गया। 1975-76 में कुल सिंचित क्षेत्र 1680 लाख हेक्टेयर था, इस वर्ष सरकारी साधनों से सिंचित क्षेत्र में दो लाख चालीस हजार हेक्टेयर की वृद्धि हुई है एवं निजी साधनों से बीस हजार छह सौ हेक्टेयर अधिक रकबे में सिंचाई होने लगी है। इसके अतिरिक्त बाण सागर और राज-घाट जैसी बड़ी योजनाओं पर काम शुरू हो गया है, चम्बल, तवा, बारना, महानदी जला-शय और हसदेव दायी नहर आदि योजनाएं पूरी होने को हैं एवं सिंचाई भी होने लगी है। इसके अतिरिक्त चौदह सौ से अधिक छोटी सिंचाई योजनाओं पर कार्य प्रगति पर है। नर्मदा के विकास हेतु राज्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सहयोग लेगा एवं इसका प्रयोग सिंचाई एवं जल विद्युत हेतु किया जाएगा।

विद्युत्

प्रथम योजनाकाल में मध्यप्रदेश में कुल विद्युत उत्पादन क्षमता 78 मे० वा० थी। विद्युत पर 841.8 लाख रु० व्यय किए गए थे। छोटे-छोटे विद्युत उत्पादन केन्द्र थे यह प्रदेश में विद्युत् विकास की प्रारम्भिक अवस्था थी। द्वितीय योजना में इस ओर विशेष ध्यान दिया गया, इस योजना में 6478.72 लाख रु० रखे गए। योजना के अन्त तक विद्युत उत्पादन क्षमता 2,06,000 कि० वा० तथा तृतीय योजनाकाल के अन्त में 2,87,300 कि० वा० हो गयी। चतुर्थ योजना के अन्त में प्रदेश की विद्युत् उत्पादन क्षमता 670 मे० वा० थी जो 1974-75 में 758 मे० वा० हो गयी। वर्तमान समय में स्थापित क्षमता 1132.5 मे० वा० हो गई। और अधिक उत्पादन करने हेतु सतपुड़ा ताप बिजली घर में दो नए जनरेटर लगाए जा रहे हैं जिसमें एक इसी महीने और दूसरा अगले सितम्बर तक चालू हो जाएगा। इनके चालू हो जाने से पन्द्रह सौ बयालीस मे० वा० विद्युत् उत्पन्न होना प्रारम्भ हो जायेगा। ग्रामीण विद्युतीकरण का तेजी से विस्तार किया जा रहा है। गांव में बिजली पहुंचाने में काफी प्रगति हुई है। इस वर्ष दो हजार छह सौ पचास गावों को बिजली देने का लक्ष्य था किन्तु जनवरी तक दो हजार आठ सौ गांवों में बिजली पहुंचाई जा चुकी है एवं बीस हजार दो सौ सिंचाई पम्पों को जन-वरी तक बिजली दी जा चुकी थी।

यातायात

आर्थिक विकास की पहली सीढ़ी यातायात के साधनों का विकास हैं। वास्तव में यातायात मार्गों के सघन जाल विकसित क्षेत्रों के द्योतक हैं। प्रदेश में रेल मार्गों तथा सड़कों की लम्बाई अन्य राज्यों की तुलना में बहुत कम है। 1976-77 में प्रति लाख जनसंख्या पर 99.11 कि० मी० सड़कें थीं, जबकि भारत का औसत 12 कि० मी० था। इसी प्रकार रेलवे लाइनों की लम्बाई बड़ी लाइन 3637 कि० मी० मीटर लाइन, 498 कि० मी० तथा छोटी लाइन 1117 कि० मी० है। वायु मार्ग प्रदेश में कोई अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा नहीं है किन्तु देश के विभिन्न महत्वपूर्ण नगरों को जोड़ने वाले वायु मार्ग इस प्रदेश से होते हुए जाते हैं। उत्तर में दिल्ली तथा दक्षिण में बम्बई को जोड़ने वाला मार्ग ग्वालियर, भोपाल तथा इन्दौर से होता हुआ जाता है। उत्तरी मध्यप्रदेश में खुजराहो अब दिल्ली तथा वारा-णसी से जोड़ा गया है।

इस वर्ष 1100 कि० मी० लम्बी सड़कें और बीस बड़े पुल बनाने का कार्यक्रम है। अगले वर्ष 1200 कि० मी० लम्बी सड़कें और 20 बड़े पुलों का निर्माण किया जाएगा। इस कार्य में गति लाने के लिए निगम की स्थापना की गई है।

स्वास्थ्य सेवाएं

प्रदेश में बड़ी संख्या में स्वास्थ्य केन्द्र खोले गए हैं। इस वर्ष एक हजार दो सौ डाक्टरों की भर्ती की गई है। आदिवासी और हरिजन डाक्टरों को प्राथमिकता देकर नियुक्त किया गया है। देशी इलाज को प्राथमिकता देकर इसे व्यापक बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। नए आयुर्वेदिक औषधालय खोले जाएंगे जिनमें से 50 आदिवासी क्षेत्र में होंगे। ऐसे फलाइटिस को रोकने के हेतु स्वास्थ्य सेवाओं ने तत्परता से कार्य किया। कई नेत्र शिविर लगाए गए जिससे ग्रामीण लोगों के नेत्रों का निःशुल्क परीक्षण करके आपरेशन किए गए। डेनमार्क और केन्द्रीय सरकार की सहायता से आठ जिलों में परिवार कल्याण के कार्यों का विस्तार किया गया। सरकारी आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का तेजी से विस्तार कर रही है और अधिक सुविधाएं प्रदान कर रही है। परिवार कल्याण कार्यक्रम में सरपंच, पंच और गांवों के लोगों का सहयोग अधिक से अधिक लिया जा रहा है। राज्य में तीन हजार से अधिक स्वास्थ्य केन्द्रों और लगभग दो सौ अन्य कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण दिया गया है। बड़ी संख्या में ग्रामीण दाइयों को प्रशिक्षण दिया गया है।

पेयजल

राज्य ने ग्रामीण पेयजल योजनाओं में जनसहयोग की शर्त हटा दी है जहां पीने के पानी की असुविधा है वहां की योजनाओं को स्वीकृत करने के लिए कलेक्टरों और कमिश्नरों को और अधिक वित्तीय अधिकार दिए गए हैं। जिन गांवों में हैण्ड पम्प लगे हैं उनके रख-रखाव का कार्य शासन ने खुद सम्भाल लिया है। अभी तक 1547 गांवों में पीने के पानी की व्यवस्था की जा चुकी है। अगले वर्ष में 4000 गांवों में पीने के पानी का प्रबन्ध कर दिया जाएगा। इस समय प्रदेश के 122 शहरों में पेयजल योजनाओं पर कार्य चल रहा है।

शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य किया जा रहा है। माध्यमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने पर जोर दिया जा रहा है। शिक्षा को व्यवसाय उन्मुख बनाने की दिशा में प्रगति हो रही है। इस वर्ष एक हजार प्राथमिक और चार सौ तीस माध्यमिक शालाएं खोली गई हैं जिनमें से 25 प्रतिशत आदिवासी क्षेत्रों में हैं। जो बच्चे स्कूल नहीं जा सकते उन्हें स्कूल के बाहर पढ़ाने के लिए दो सौ केन्द्र खोले गए हैं। राज्य शासन उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने का प्रयत्न कर रहा है। छात्रों को रचनात्मक कार्यों में लगाने के लिए राष्ट्रीय सेवा योजना का प्रसार किया गया है। राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा अभियान इस प्रदेश में पूरे जोर से चलाया जा रहा है। विश्व बाल वर्ष के दौरान बच्चों की भलाई के कार्यक्रमों के देशव्यापी प्रबन्ध किए जा रहे हैं। आदिवासी एवं हरिजन विकास में विद्यार्थियों के सक्रिय योगदान से जनवरी में प्रदेश स्तरीय 'मिलन मड़ई', का आयोजन किया गया जिसमें लगभग 30 हजार छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। प्रदेश में शिक्षा का प्रसार तेजी से हो रहा है? वास्तव में शिक्षित व्यक्ति देश के आदर्श नागरिक होते हैं, प्रदेश में शिक्षा प्रसार के हेतु सभी सम्भव प्रयत्न किए जा रहे हैं जिससे व्यक्ति अपने आर्थिक सामाजिक राजनैतिक एवं बौद्धिक विकास में तेजी से आगे बढ़ सकें। ✱

शोध-छात्र, वाणिज्य विभाग
सागर विश्वविद्यालय, सागर

गरीबों का सच्चा साथी नारियल

श्रीमती लक्ष्मी चौहान

नारियल की खेती के क्षेत्र में भारत का स्थान विश्व में तीसरा है। इस स्थान तक पहुंचने के लिए भारत ने पिछले पचास-साठ वर्षों से अथक परिश्रम किया है। लगभग ग्यारह लाख हेक्टेयर जमीन में भारतीय नारियल की फसल होती है। पूरे विश्व में अड़सठ लाख हेक्टेयर जमीन नारियल की फसल से घिरी हुई है। भारत में नारियल उद्योग का विकास, आजादी के बाद, बड़ी तेजी से हुआ। इस के बावजूद ऐसा नहीं कहा जा सकता कि विकास की अब कोई गुंजाइश नहीं रही। प्रयास करने पर भारत का स्थान विश्व में दूसरा तो हो ही सकता है। प्रथम स्थान मलेशिया—इण्डोनेशिया का है। यथा-संभव ये ही देश नारियल की जन्म भूमि भी है।

भूमध्यरेखा के आसपास, दुनिया के लगभग सभी देशों में नारियल की पैदावार होती है। आठ सौ मीटर की ऊंचाई तक, गर्म और आर्द्र जलवायु में, नारियल खूब पनपता है।

1934 में हाईब्रिड नारियल विकसित किया गया। यदि हम भारतीय पश्चिमी किनारे के नारियल से तुलना करें, तो हाई-ब्रिड नारियल में 39 से 108 प्रतिशत तक अधिक गूदा होता है। फसल भी 42 से 81 प्रतिशत तक अधिक उतरती है। हाईब्रिड तकनीक के क्षेत्र में भारत को अभी बहुत आगे तक जाना है। हाईब्रिड नारियल दो प्रकार के होते हैं—'टी×डी' और 'डी×टी'।

एक और प्रकार का नारियल विकसित करने का बहुत प्रयास मानव द्वारा हो रहा है, किन्तु अब तक सफलता नहीं मिली है। उसे हम 'त्रिनेत्र' या 'त्रिमूर्ति' के नाम से पहचान सकते हैं। नारियल के रेशे उतारने पर अन्दर के खोल पर तीन बिन्दियां नजर आती हैं। इन्हें नारियल के नेत्र कहा जाता है। आमतौर पर इन्हीं तीन में से किसी एक नेत्र में से नारियल का वृक्ष फूटता है, किन्तु कभी-कभी प्रकृति अपने ही साथ मसखरी करती है और तीनों नेत्रों में से एक-एक वृक्ष फूट पड़ता है। तीन वृक्षों का एक गुच्छा ही 'त्रिनेत्र' है।

मानव चाहता है कि 'त्रिनेत्र' नारियल प्रकृति का केवल एक अपवाद न हो, बल्कि इस चमत्कार को तकनीक के जोर पर काबू में कर लिया जाए। जब भी यह सम्भव होगा, तब 'त्रिनेत्र' का औद्योगिक

(शेष आवरण 3 पर)

आधुनिक तीर्थ : व्यास-सतलज संगम परियोजना

ब्रह्म प्रकाश गुप्त

ऋग्वैदिक काल--- सप्तसिन्धु सभ्यता के युग में मुनि विश्वामित्र का क्रोध अवर्णनीय था। क्या राजा-महाराजा, क्या ऋषि-मुनि, क्या देवता, क्या मनुष्य, सभी उनके क्रोध से डरते थे। दूसरी ओर थे मुनि वशिष्ठ---शांत और सौम्य स्वभाव वाले। दोनों ही सर्वगुण सम्पन्न थे। स्वभाव में विरोधाभास होने के कारण कभी-कभी दोनों में परस्पर विरोध भी तीव्र रूप में प्रकट होता था। ऐसे ही एक अवसर पर क्रोध के वशीभूत होकर मुनि विश्वामित्र ने मुनि वशिष्ठ के सौ पुत्रों का बध कर दिया। वशिष्ठ मुनि का मन इस घोर दुख को न सह सका। वे विक्षिप्त अवस्था में हिमालय पर्वत पर घूमने लगे। जब यह कष्ट उन्हें बिल्कुल असह्य हो गया तो उन्होंने देह त्याग का निश्चय कर लिया और अपने आपको एक रस्सी से बांधकर अर्जकीमा नदी में फेंक दिया। परन्तु अर्जकीमा नदी भला इतने महान ऋषि का शरीर इस प्रकार नश्वर रूप में कैसे स्वीकार करती उसने एक झटके के साथ मुनि के सारे बंधन तोड़ दिए और उन्हें जल के बाहर तट पर फेंक दिया। तभी से अर्जकीमा का नाम विपाशा (अर्थात् पाशा से मुक्त करने वाली) नदी पड़ गया। कालान्तर में यही विपाशा नाम व्यासा और फिर व्यास बन गया। वैसे इसका 'व्यास" नामकरण महर्षि वेदव्यास की तपोभूमि होने के साथ भी जुड़ा हुआ है। ऐसी भी मान्यता है कि पृथ्वी के गर्भ में बहने वाली ज्ञान गंगा सरस्वती (जिसे अदृश्य नदी भी कहा जाता है) का प्रथम चरण जो पृथ्वी के ऊपर पड़ा, वही व्यास नदी का उद्गम स्थल है।

स्कन्धपुराण की एक कथा के अनुसार एक बार धन के लोभ से क्षत्रियों ने ब्राह्मणों का नाश कर दिया। सब ब्राह्मण स्त्री-पुरुष नष्ट हो गए। केवल एक स्त्री किसी प्रकार छिपकर जीवित रह गई। उसने अपने गर्भ को भी अपने उरुप्रदेश (जंघा) में छिपाकर सुरक्षित कर लिया। समयानुसार उसके गर्भ से एक महातेजस्वी, जलते हुए मुख वाला, अति भयंकर आकृति तथा उन्नतिस शिराधारी बालक उत्पन्न हुआ। उरुप्रदेश को भेदकर उत्पन्न होने से उसका नाम और्य पड़ा। गर्भ में ही क्षत्रियों के प्रति रोष भाव होने के कारण उसके मुख से ज्वाला निकलती थी, जो सारी पृथ्वी को जलाने लगी। इन्द्र ने भयंकर वर्षा तथा तूफान द्वारा इस ज्वाला को शांत करने का प्रयास किया। परन्तु वह तो और भी बढ़ती गई। जब और कोई उपाय न रहा तो देवताओं ने ब्रह्माजी की शरण ली।

ब्रह्माजी देवताओं को लेकर और्य के के पास पहुंचे और कहा ---"हे द्विजों में उत्तम, भार्गव कुलश्रेष्ठ, किस कारण से भूमि को जलाते हो? मेरे कारण का शीघ्र विराम करो।"

और्य ने कहा---"हे श्रेष्ठतम! आपके वचन से मैं अभी निवृत्त हुआ। आपकी आज्ञा से मैंने अग्नि को त्यागा। अब यह अग्नि जिस प्रकार से समुद्र तक चली जाए, और वहां सागर में लीन होकर शांत हो, ऐसा उपाय आप करें।"

ब्रह्माजी ने अपनी पुत्री सरस्वती को आज्ञा दी कि वह तुरन्त इस अग्नि को ग्रहण करके महासागर के लिए प्रस्थान करे; परन्तु एक समस्या थी कि कहीं मार्ग में यह प्रचण्ड हो उठी तो क्या होगा? ब्रह्माजी ने उसे द्वैतवन (हिमालय पर्वत) में साधना लीन महामुनि मार्कण्डेय के आश्रम में टलक्ष वृक्ष में प्रविष्ट होकर उसमें से जलधारा के रूप में प्रकट होने को कहा। उसके बाद महामुनि की आज्ञानुसार उनके निर्दिष्ट मार्ग से महासागर की ओर प्रणाम करने कहा मार्कण्डेय मुनि ने टलक्ष वृक्ष से जलधारा के प्रकट होते ही अपने दिव्य चक्षु से सरस्वती को पहचान लिया और उसका प्रयोजन भी समझ लिया। उन्होंने ब्रह्माजी तथा सरस्वती जी की स्तुति करके कहा---

"हे देवी "आदिकाल में जिसका पवित्र ब्रह्म-सरोवर नाम था, बाद में नागह्द हुआ, और उस काल में कुरुक्षेत्र नाम हुआ, सर्वप्रथम वहां प्रकट हो। फिर जहां भगवान केशव ने पाण्डुपुत्र छिपाए थे, उस विराट्नगर में प्रवेश करो। फिर, पुष्कर, खजूरीबन, अर्बुदारण्य (आबू पर्वत) बशिष्ठ मुनि के आश्रम वटबन, द्वारवती (द्वारिकापुरी) कोलादेवी, आदि स्थानों पर प्रकट होती हुई, परन्तु मूलतः पृथ्वी के गर्भ में ही यात्रा करती हुई, महासागर में प्रवेश करो।"

आज यह देवस्थली, अर्थात्, ज्ञानगंगा सरस्वती का उद्गमस्थल व्यास मुहाना, महाभारत के रचयिता महर्षि वेदव्यास की तपोभूमि, पुनः प्रकाश में आ रही है---एक महत्वपूर्ण आधुनिक तीर्थस्थान या मानव-मन्दिर के रूप में इसका यह नया तीर्थ रूप मात्र कल्पना या रुढ़िवादी भावुकता नहीं कहा जा सकेगा। देश के आर्थिक---सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने वाला यह आधुनिक मन्दिर लाखों लोगों के जीवन को नई दिशा देने में समर्थ होगा। चौदह-चौदह किलोमीटर लम्बी दो अद्वितीय सुरंगों, भूमिगत तथा बीच में बारह किलोमीटर खुले स्थान पर प्रवाह द्वारा शतद्रु (सतलुज) के जल को एक हजार फुट की ऊंचाई से व्यास में गिराकर व्यास-सतलुज संगम परियोजना, पंडोह बांध पर 177.6 लाख घनमीटर क्षमता के जलाशय के माध्यम से, (990) मेगावाट विद्युत्शक्ति का उत्पादन करेगी। लगभग सवा लाख हेक्टेयर भूमि के सिंचन की भी व्यवस्था है। पूर्णरूपेण विभागीय निर्माण कौशल की प्रतीक इस परियोजना में कई विशेषताओं और नवीनताओं का समावेश है, जो जल-विद्युत् परियोजना निर्माण कौशल में अद्वितीय हैं, और भारतीय यांत्रिकी की विकासोन्मुखी संभावनाओं का ज्वलन्त उदाहरण है।●

गोबर गैस से गांव की काया पलट

महेश अग्रवाल

"गोबर को जलाना उन्नति को जलाना है।" ये शब्द उस गांव के एक मकान की दीवार पर लिखे हैं जिसमें आज से लगभग चार महीने पहले तक गोबर के कण्डे जलाये जाते थे। यह गांव है उत्तर प्रदेश में इटावा जिले के भावनगर ब्लाक के अन्तर्गत फतेहसिंह का पुरवा"। हां, अब इस गांव में गोबर के कण्डे तो नहीं जलते लेकिन गांव के पूरे सत्ताइस घरों में दोनों समय का खाना पकाने का साधन अब भी गोबर ही है परन्तु गैस के रूप में। इस गांव में दो बहुत बड़े गोबर-गैस सामुदायिक स्तर पर प्लांट लगाए गए हैं।

फतेहसिंह का पुरवा में गोबर गैस पिछले वर्ष के नवम्बर माह से घरों को मिलने लगी है। वैसे गांव में प्लांट प्रयोगात्मक रूप से लगाये गये हैं जो सफलता से कार्य कर रहे हैं। इस के निर्माण का पूरा व्यय सरकार ने किया है। इनके संचालन का खर्चा अभी सरकार ही वहन कर रही है। गांव को चुनने, प्लांट लगाने और गांव वालों को प्रेरणा देने का श्रेय उत्तर प्रदेश राज्य सरकार के विकास, अन्वेषण एवं प्रयोग विभाग, राज्य नियोजन संस्थान डिवीजन को है।

गोबर गैस लगाने की कहानी

इस गांव के लोग बहुत गरीब तथा पिछड़े हुए हैं। इनका मुख्य धंधा खेती-बाड़ी है किन्तु उपज बहुत कम मिलती है। इसका एक कारण है काफी जमीन रेही है। दूसरे, सारा गोबर जला देने से खेतों को खाद नहीं मिलती। तीसरे, यहां पानी का स्तर काफी ऊंचा होते हुए भी इसका ठीक उपयोग नहीं हो पाता। यहां ज्यादातर ज्वार, बाजरा, रागी, धान, मक्का, मटर, चने, आदि की खेती की जाती है।

फिर इस गांव को ही गोबर गैस प्लांट के लिए क्यों चुना गया? इसके कारण ये थे—

(1) यह क्षेत्र पिछड़ा है।

(2) पशुओं की संख्या गोबर प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है।

(3) गांव का प्रत्येक व्यक्ति सहयोग देने को तैयार था।

(4) गांव छोटा है, उसमें केवल सत्ताईस मकान हैं।

(5) परिवार छोटे तथा सीमित हैं।

(6) गांव में राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं है।

(7) गांव के लोग सीधे-साधे और सरल स्वभाव के हैं।

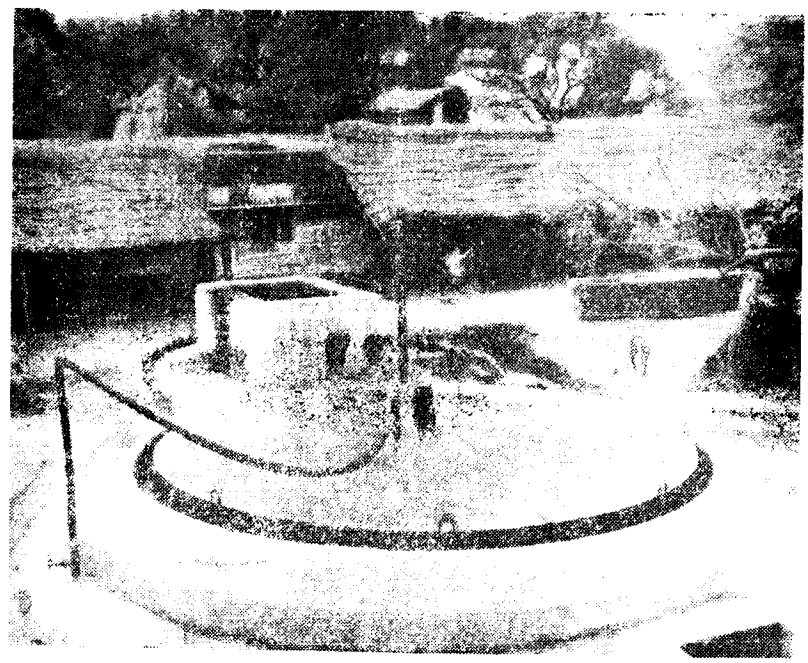

फतहसिंह का पुरवा में गोबर गैस प्लांट

(8) गांव के सभी मकान एक दूसरे से सट कर बने हैं। इस कारण पाइप लाइन की फिटिंग, देखरेख और गैस की सप्लाई में आसानी हो गई।

(9) आसपास के क्षेत्र में बिजली न होने से इसका महत्व बढ़ जाता है। प्लांट लगते समय गांव वालों ने सहयोग ही नहीं दिया बल्कि सरकारी सामान की हिफाजत और चौकसी भी की। कोई सामान चोरी नहीं गया गांव वालों ने जिम्मेदारी दिखाई और अड़चनें पैदा नहीं की।

प्लांट लगाना जोखिम भरा काम था। क्योंकि, पानी भूमि की सतह से केवल छः फुट नीचे निकल आया था और प्लांट लगाने के लिए खुदाई लगभग बीस फुट गहरी करनी थी। यह काम पहले तो असंभव लगा। किन्तु इंजीनियर श्री मुहम्मद इब्राहीम तुर्क की सूझबूझ और गांव के लोगों के हताश न होने के कारण ही यह कार्य पूरा हो सका। डर था कि कहीं गड्ढा खोदते समय ऊपर से मिट्टी ढह न जाए और नीचे मजदूर न दब जाएं। किन्तु गांव वालों ने श्री इब्राहीम से प्रेरणा पाकर इस काम को पूरा कर दिखाया।

इस गांव के नेता या अध्यक्ष श्री छोटे लाल हैं। श्री छोटे लाल ने बताया कि गोबर गैस प्लांट लगने से गांव में बहुत सुविधा हो गई है। क्या जवान, क्या

बूढ़े, क्या औरतें क्या बच्चे सभी प्रसन्न हैं। उन्होंने बताया कि जब घरों में पहली बार गैस का चूल्हा जलाया गया तो एक अजूबे से कम नहीं लगा। 18 नवम्बर, 1978 को पहली बार गैस की सप्लाई शुरू हुई थी।

इंजीनियर श्री मुहम्मद इब्राहीम ने बताया कि गैस की पाइप की फिटिंग के समय पूरे गांव में सिर्फ एक अधेड़ महिला ने ही ऐतराज किया था और वह घर में ताला लगा कर चली गई थी। गांव वालों ने ताला तोड़ कर पाईप की फिटिंग करा दी। गैस आने पर उसके फायदे देख कर उसी महिला ने श्री इब्राहीम को सबसे ज्यादा दुआएं दीं।

गोबर गैस के लाभ

श्री छोटे लाल की पत्नी श्रीमती ज्ञानवती ने हमें गोबर गैस के चूल्हे पर रोटी सेंक कर दिखाई और कहा जरा चख कर तो देखिए। यह चूल्हे की रोटी से ज्यादा स्वादिष्ट होती है। ज्ञानवती के कथनानुसार सबसे बड़ा फायदा तो यह हुआ है कि अब चूल्हे के धुंए से गांव की महिलाओं की आंखें नहीं फूटतीं। इसके अलावा और भी फायदे उन्होंने बताए:—

(1) कंडों को बनाने में एक घंटा रोज लगता था, वह समय अब बच जाता है।

(2) धुंआ नहीं लगता। इससे घर के लोगों को राहत मिली।

(3) मकान की दीवारें काली नहीं होतीं। गोबर और लकड़ी के धुंए से मकान की दीवारें इस कदर काली हो गई थीं, मानों उन पर कोलतार से पोताई कर रखी हो।

(4) चूल्हा जलाने में बहुत समय लगता था उसकी बचत।

(5) रसोईघर में सफाई और ज्यादा जगह।

(6) जलाने में आसान है, इसे फूंकना नहीं पड़ता।

(6) गोबर गैस का चूल्हा जगह कम घेरता है, इसे लीपना पोतना नहीं पड़ता। जबकि चूल्हे को जलाने के बाद ठंडा करके लीपने-पोतने में परेशानी होती थी।

लेखक को श्रीमती ज्ञान देवी गोबर गैस पर चपाती सेंक कर दिखा रही हैं।

(8) चूल्हे पर रोटी काली हो जाती थी, इस पर नहीं होती। सब्जी जल्दी और स्वादिष्ट बनती है।

(9) गैस के चूल्हे पर बर्तन काले नहीं होते इसलिए उन्हें साफ करना आसान होता है। अब बरतनों को रगड़ना नहीं पड़ता।

(10) ईंधन इकट्ठा करने में औरतें और बच्चों का जो समय और मेहनत लगती थी उसकी बचत होती है।

(11) गोबर गैस मिलने का समय बंधा होने के कारण दोनों समय सभी घरों में खाना एक साथ एक ही समय में बन जाता है। इससे खाना बनने में देरी नहीं होती और पारिवारिक कलह नहीं होती। इससे पहले चूल्हा, जलाने, फूंकने में खाना पकने में देरी हो जाती थी जिससे कभी-कभी झगड़े और पति-पत्नी में कलह हो जाती थी। अब यह शिकायत नहीं रही। गैस की सप्लाई खुलने और बन्द होने से पन्द्रह मिनट पहले घंटी भी बजती है। महिलाओं को गैस जलाने के समय पूरी सावधानी बरतना सिखा दिया गया है।

गोबर की वापसी

श्री छोटे लाल ने बताया कि हमें हैरानी तो इस बात की है कि हम जितना गोबर नाप कर देते हैं, उतना ही गोबर नाप कर हमें वापस मिल जाता है और गैस तो मुफ्त में मिल जाती है। पहले गोबर जला देने से खेतों को खाद नहीं मिलती थी, परन्तु अब तो तैयार खाद मिल भी जाती है। वैसे हर घर के पास एक एक कम्पोस्ट का पक्का गड्ढा बना दिया गया है जिसमें घर का सारा कूड़ा कचरा और गोबर डालते रहते हैं।

श्रीमती ज्ञानवती ने बताया कि जब पहले पहल प्लांट के लिए गोबर की जरूरत हुई तब गांव को गोबर कम पड़ गया। तब खेतों और जंगलों से गोबर इकट्ठा किया जो तीन चार क्विंटल था। किन्तु फिर भी कम रहा। ज्ञानवती तब अपने मैके से ट्रक भर कर लाई। कुछ गोबर दूसरी जगहों से भी मंगाया गया। परन्तु अब तो गांव का ही गोबर पर्याप्त रहता है।

महिलाओं को अब गोबर के कण्डे और लकड़ी भर कर नहीं रखनी पड़ती, इस कारण घर में जगह बच जाती है

और गन्दगी भी नहीं होती। बरसात के मौसम में ईंधन के गीले होने और चूल्हा मुश्किल से जलने की समस्या भी नहीं रही। अब बरसात के मौसम के लिए कण्डे बना कर भंडार करने की जरूरत नहीं है।

अब महिलाओं और बच्चों का काफी समय बच जाता है। इससे बच्चों को तो पढ़ाई का वक्त ज्यादा मिल जाता है और महिलाओं को सफाई और घर के अन्य कामों के लिए पर्याप्त समय रहता है। बल्कि अब वे खाली भी रहती हैं। इस खाली समय में वे पढ़ाई और सिलाई सीखने की सोच रही हैं।

गोबर गैस से रोशनी

गोबर गैस से एक जैनेरेटर चालू करने का प्रयास हो रहा है। इसके चलने पर हर घर में बिजली मिलेगी। बिजली की फिटिंग हर घर में पहले ही हो चुकी है और हर घर में बल्ब लगे देखे जा सकते हैं। गांव की गलियां और सड़कों के लिए भी बिजली का प्रबन्ध किया जा रहा है।

गोबर गैस से डीजल इंजन चला कर ट्यूब वैल के जरिए पीने और सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध हो जाएगा। इसके अलावा चारा और कुट्टी काटने का यंत्र, आटा पीसने की चक्की तथा गहाई यंत्र आदि भी चलने लगेंगे। इससे गांव के लोगों को अतिरिक्त आय होने की आशा है।

सबकी आंख का तारा

आसपास के क्षेत्रों के लिए यह अभी तक पिछड़ा गांव आदर्श गांव बन गया है। अब सभी गांवों की निगाहें इसी गांव पर केन्द्रित हैं और वे इस गांव के भाग्य को सराहते हैं। श्री छोटे लाल ने बताया कि अब दूसरे गांवों के लोग इस गांव में अपनी बेटियां ब्याहना चाहते हैं, क्योंकि यहां रोटी पकाना आसान हो गया है, यहां बिजली लगेगी, मशीनें चलेंगी और बिजली की चक्की पर आटा पिसेगा। इससे उनकी बेटियों को आराम मिलेगा।

अब अन्य गांवों के लोग इस गांव से प्रेरणा पाकर अपने गांवों में भी गोबर गैस प्लांट लगवाने की सोच रहे हैं। राज्य सरकार निःसन्देह उन्हें सर संभव तकनीकी सहायता उपलब्ध कराएगी।

अन्य गांवों की प्रतिक्रियाएं

श्री छोटे लाल ने बतलाया कि शुरू में हमने सोचा भी न था कि इस प्लांट से इतने फायदे होंगे। हम सोचते थे कि सरकार खामख्वाह इतना पैसा बरबाद कर रही है। हमें पास पड़ोस के गांव वालों ने खूब भड़काया कि सरकार सारा खर्चा तुमसे वसूल करेगी और बदले में तुम्हारे खेत ले लेगी। किन्तु अब ये लोग सोचते हैं काश यह गोबर गैस प्लांट हमारे गांव में लगा होता। कुछ समय पहले यहां नीदरलैंड से इस प्लांट का सर्वेक्षण करने एक दल आया था, जो इसकी फिल्म बना कर ले गया है।

पशुधन का विकास

गांव के लिए और अधिक गोबर गैस की प्राप्ति के लिए गोबर और अधिक चाहिए। इसके लिये गांव वाले और दुधारू पशु खरीदने को तैयार हैं। सरकार की ओर से उन्हें पशु खरीदने के लिए ऋण उपलब्ध कराने के प्रयत्न हो रहे हैं। इन गाय भैंसों से प्राप्त अतिरिक्त दूध बेच कर गांव की आमदनी भी बढ़ेगी।

सरकार का संरक्षण हटने के बाद गांव वाले स्वयं इस प्लांट को चलाने के लिए तैयार हैं और इस पर आने वाले खर्चे को उठाने में सभी सहयोग करेंगे।

यह है गोबर गैस का करिश्मा जिसने फतह सिंह का पूरवा गांव की काया ही पलट दी है।●

श्रम का नव शृंगार करो

श्रम की जय-जय कार करो।
श्रम का नव शृंगार करो।

कैसी भी हो नई दिशा,
बढ़ चलें उस ओर जतन,
महक उठेगा तेजी से,
जीवन का सारा आंगन।

श्रम की निष्ठा से हरदम,
जन-मन का अंधियार हरो,
श्रम का नव शृंगार करो।

वृक्षारोपण के द्वारा,
जंगल में ला दो मंगल,
मरुस्थल की मिट्टी में भी,
श्रम से खिलने लगें कमल।

श्रम से न यह अभियान कभी,
कोशिश बारंबार करो,
श्रम का नव शृंगार करो।

हरियाली अब साहस की,
देते हैं श्रम के अंकुर,
नव संकल्पों की रौनक,
भर दो चारों ओर मधुर।

सामूहिक उन्नति के हित,
जीवन भर सहकार करो।
श्रम का नव शृंगार करो,

जगदीश चन्द्र शर्मा

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स लिमिटेड

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स के विशेष उत्कृष्ट गुण वाले सोडियम हाइड्रोसल्फाईट से खांड में और भी मिठास आ जाती है ।

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स का सोडियम हाईड्रोसल्फाईट सबसे अच्छा अपचायक है ।

यह बड़ा तेज है और गर्म करने की प्रक्रिया के अन्त में काम में लाया जाता है जबकि गन्ने का रस विपणन योग्य खांड के रूप में परिवर्तित होता है ।

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स का भारत में यह अकेला ही संयंत्र है जिसमें अद्‌भुत सोडियम फोरमेट प्रोसेस काम में लायी जाती है और इसमें जिंक या पारे का थोड़ा सा भी अंश नहीं होता । यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि जब कैमिकल का प्रयोग खाद्‌य संरक्षण के रूप में किया जाता है तो जिंक या पारे की विद्‌यमानता इसे मानव उपभोग के लिए नुकसान देह बना सकती है ।

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स का हाईड्रोसल्फाइट भारतीय मानक संस्थान (आई० एस० आई०) द्वारा प्रमाणित है ।

शुद्धता : 84-88%

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स का हाईड्रोसल्फाइट न सिर्फ खांड को एक मनमोहक सुनहरी पीला रंग ही देता है बल्कि यह बाजार में इस समय पाए जाने वाले किसी भी अन्य सोडियम हाइड्रोसल्फाईट से अधिक मिठास देने वाला होता है ।

विशेष जानकारी के लिए इनसे सम्पर्क करें :—

तमिलनाडु कैमिकल प्रोडक्ट्स लिमिटेड
एल० एल० ए० बिल्डिंगस, तासरो मंजिल,
735-अन्ना मलाई, मद्रास-600002

दूरभाष	:	83968, 86989 टेलेक्स एम०एस० 521
ग्रामस	:	हिसाइट मद्रास
फैक्टरी	:	करैकुड़ी, जिला रामानाथपुरम
दूरभाष	:	674
ग्रामस	:	हिसाइट करैकुड़ी

दहेज की समस्या : एक अपराध

ब्रज नारायण सिंह

भारतीय समाज व्यवस्था के अन्तर्गत वैवाहिक जीवन को कुंठित करने वाले कारणों में दहेज की समस्या चिरकाल से हिन्दू समाज को खोखला करती आई है और धीरे-धीरे हिन्दू समाज के अतिरिक्त अन्य भारतीय समाजों में भी यह बीमारी फैलकर एक व्यापक संक्रामक रोग बनती जा रही है। समय-समय पर इस व्याधि से मुक्ति प्राप्ति के अनेक उपाय समाज सुधारकों द्वारा किए जाते रहे हैं और इसी प्रकार का सरकारी स्तर पर एक प्रयास आपातकाल में किया गया था। दहेज लेना और देना दोनों को ही कानूनी रूप से अवैध ठहराया गया था। पर क्या दहेज की समस्या कानूनी रूप से खत्म हो सकी ? स्पष्ट है कि समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। अतः इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस समस्या के विभिन्न पहलुओं पर थोड़ा गहराई से विचार करना आवश्यक है।

दहेज की समस्या का प्रारम्भिक रूप शायद 'आवश्यकता और पूर्ति' के सिद्धांत को लेकर आया होगा। योग्य वर और कन्या के अभाव में उनका मोल-भाव किया जाता रहा होगा। वैदिक युग में जब नारी और पुरुष को समाज में समान अधिकार प्राप्त थे; संभवतः नारी को अपने पति के चयन में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। इतना ही नहीं, स्वयम्वर की प्रथा अपने आप में प्रमाणित करती है कि समाज में नारी का स्थान, विशेष रूप से वैवाहिक संदर्भ में, पुरुष से अधिक श्रेष्ठ था और किसी सुयोग्य कन्या का पाणिग्रहण करने के लिए पुरुष को पूरी तरह अपनी योग्यता प्रमाणित करनी पड़ती थी। आज भी पर्वतीय प्रदेशों के कुछ समाजों में विशेष रूप से निम्न मध्यवर्गीय और पिछड़े हुए वर्ग में---कन्या का ही मोल होता है और वर को स्वयं या तो अपनी सेवाओं या अपने धन से कन्या के पिता को प्रसन्न कर कन्या प्राप्त करनी पड़ती है।

कालान्तर में जैसे-जैसे हिन्दू समाज का रूप मातृसत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होता गया, नारी का स्थान समाज में पुरुष की अपेक्षा हीन होता गया। कन्या के स्थान पर वर की बोली लगने लगी। इसी के साथ मध्ययुगीन समाज म नारी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण संकुचित होकर व्यवसायी रूप धारण करता गया। एक ओर इस विभीषिका ने यदि बहु-विवाह प्रथा को जन्म दिया तो दूसरी ओर रखैलों और गोलियों की समस्या भी इसके साथ जुड़ती गई। नारी, पुरुष के अत्याचार और अपनी हीन एवं शोषित दशा को करुणाद्र नेत्रों से निहारती रही। सामन्ती वर्ग तथा धनिक समाज अपनी शक्तिमद इस समस्या को झेलता और जूझता रहा, पर अशक्त और साधनहीन समाज, इस समस्या की विकराल डाढ़ा में जिस प्रकार चबाया जाता रहा, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है पिछले युग का इतिहास और साहित्य।

आर्थिक विषमता के साथ ही दहेज की समस्या को बढ़ावा देने वाला दूसरा रोग है जातिवाद। जाति और उपजातियों में बंटा हुआ हिन्दू समाज वैवाहिक समस्या की ओर और भी निर्मम हो गया। हिन्दू समाज के सम्पर्क में आया हुआ मुस्लिम समाज भी इससे अछूता न रहा। शिया और सुन्नी तथा शेख व सैय्यद आदि के उपभेद भी इसी प्रकार की संकीर्णता के नमूने हैं। संकीर्णता की परिधि जितनी तंग होती जाएगी उसके विकल्प भी उतने कम हो जाएंगे। ब्राह्मण, केवल ब्राह्मण में ही नहीं सरयूपारी, सारस्वत, कान्य-कुब्ज की सीमाओं को यदि एक ओर अतिक्रान्त नहीं करता है तो अपने अन्दर ही कुल की श्रेष्ठता का ध्यान भी रखता है। इसी प्रकार ठाकुर, वैश्य, कायस्थ सभी की सीमाएं अन्ततोगत्वा इतनी उपजातियों के संकीर्ण आवर्तों में घिर जाती हैं कि एक सामान्य आर्थिक स्थिति ग्रहस्थ के लिए यदि वह दो या तीन कन्याओं का पिता है तो उसका जीवन लड़कियों के विवाह की दुश्चिन्ता की चक्की में पिसकर इतना दयनीय हो जाता है कि वह अपने दुर्भाग्यपूर्ण जीवन को कोसता हुआ अपनी इहलीला ही समाप्त कर लेता है। यदि किसी प्रकार उसने अपने उत्तरदायित्व पूरे कर भी लिए तो या तो घर सम्पत्ति को उसे दांव पर लगाना पड़ता है या फिर बूढ़े-छोटे से ब्याह कर अपना उत्तरदायित्व पूरा करना पड़ता है। इसी विडम्बना पूर्ण स्थिति में परतन्त्र भारत का समाज अपना दम तोड़ रहा था। इसी कारण परतन्त्र भारत के साहित्यकार इस समस्या में खूब जूझे हैं और शरत तथा प्रेम चन्द जैसे साहित्यकारों ने, इस जड़ होते हुए समाज को जीभर कोसा है। दहेज और अनमेल विवाह की इस समस्या में न शहर बचे थे न गांव।

स्वतन्त्रता संग्राम में जहां देश की आजादी को प्राथमिकता दी गई वहां महात्मा गांधी और डा० कर्वे जैसे विचारकों और समाज सुधारकों ने इस समस्या की सामाजिकता के साथ इसके नैतिक पहलू को जोड़ते हुए गहराई में उतर कर, इस समस्या का समाधान खोजने की कोशिश की। इन महापुरुषों का ऐसा विश्वास था कि ज्यों-ज्यों नारी समाज शिक्षित होता जाएगा, दहेज की समस्या अपने आप समाप्त होती जाएगी। कुछ समय तक उनका यह स्वप्न पूरा भी हुआ। एक आदर्श से बंधे युवकों ने जिस प्रकार देश प्रेम की भावना से अनुप्रेरित हो कर अपना सब कुछ, बिना आगा-पीछा सोचे, देश के स्वतन्त्रता संग्राम में होम कर दिया, उसी प्रकार किसी ने विधवा से, किसी ने बिना दहेज विवाह कर इस दिशा में आदर्श स्थापित किया। ऐसा नहीं कि इन लोगों को अपनी स्थिति के अनुकूल दहेज मिल नहीं सकता था, पर दहेज लेना ऐसे युवकों ने अनैतिक मान कर और अपने परिवार के बड़े-बूढ़ों की अवमानना सहकर भी इस अनैतिकता के साथ समझौता नहीं किया। अन्यथा उस समय भी समाज में दहेज के न जाने कितने रूप बिखरे पड़े थे। कभी लड़के की पढ़ाई का खर्च, कभी दादा-दादी नाना-नानी की इच्छा आदि के नाम पर दहेज लिया जाता रहा और कन्या का पिता, क्योंकि उसे लड़की ब्याहनी है, इस सब के साथ समझौता करता रहा। परतन्त्र भारत की मैं एक ऐसी घटना जानता हूं जहां विवाह हो

गने पर भी लड़की के पिता को अपना मकान
गरवी रख कर पांच हजार रुपए अतिरिक्त
ने पड़े थे क्योंकि लड़के के पिता को
ड़की का रंग काला लग रहा था और
नका तर्क था कि लड़की के पिता ने
ो लड़की दिखाई थी वह अधिक सुन्दर
ौर सुशील थी। इस प्रकार की घटनाएं
में भले ही आज अपवाद लगें पर आए
दिन अखबारों में विवाहित युवतियों के
ारा आत्महत्या की घटनाएं प्रमाणित
रती हैं कि दहेज की समस्या घटने के
थान पर विकराल रूप से बढ़ती जा
ही है।

आजादी के साथ लोगों को यह विश्वास
आ कि नए माहौल में पत्नी हुई हमारी
ई पीढ़ी अपनी पुरानी संकीर्णताओं और
याधियों की बेड़ियों को तोड़कर आजाद
ोगी और हिन्दू, मुसलमान तथा अन्य
माजों के वैवाहिक पहलुओं में सुधार
ोगा पर इस दिशा में निराशा ही हाथ
गी। गांधी-युग का आदर्श काफूर हो
या। भौतिकता की तीव्र आंधी ने
राने सब कुछ को तो उखाड़ फेंका ही
र नए को जमाने में असमर्थ रहा।
सा और भौतक सुविधाओं की आवाज
ारों ओर जोर पकड़ती गई। जैसे-जैसे
ाजनीति हमारे सामाजिक और नैतिक
ीवन पर हावी होती गई, युवा वर्ग
ी लगने लगा कि पैसा और पैसे से उत्पन्न
विधाएं ही सब कुछ हैं। इसके अतिरिक्त
दि कुछ है तो केवल "बकवास"। इस
कार का यथार्थवादी चश्मा पहनकर
मारा युवावर्ग अनुभव करने लगा कि
र्थाभाव में पिसकर, कोरे आदर्शवाद
सहारे जीना मात्र मूर्खता होगी। जवानी में
ी सुख सुविधाओं को भोगने के आकांक्षी
वावर्ग को दहेज का सुगम रास्ता मिल
या। विदेशों से बढ़ते हुए सम्पर्क ने भी
स दिशा में घृताहुति का काम किया।
निक प्रयोग में आने वाली आयातित
स्तुओं के प्रति बढ़ता हुआ आकर्षण
ासक्ति का रूप धारण कर बैठा।
वाह की रस्में धीरे-धीरे लम्बी होने
गीं। इम्पोर्टेड ट्रांजिस्टर, रेडियोग्राम,
प रिकार्डर, कैमरा, स्कूटर और कार
र पक्ष की मांग के आवश्यक हिस्से बनते
ए। अपनी-अपनी हैसियत के अनुरूप
वर पक्ष के लोग लिस्ट बना लेते हैं
और कन्या पक्ष के लोग अपनी सामर्थ्य
के अनुरूप उनकी पूर्ति करते हैं। कुछ
सहर्ष और कुछ विवशतावश।

यहीं से समस्या का एक और पहलू सामने आता है। आजादी के साथ समाज के कुछ वर्गों में पैसा इतनी तेजी से आया कि कल जो भिखारी था वह आज लखपति हो गया। ठेकेदारी, कोटा परमिट और इन सब के ऊपर स्मगलिंग के नए आयामों ने पैसे की सामर्थ्य के आगे सामाजिक नैतिकता को पंगु कर दिया। विशेष रूप से काले धन की कमाई का शिकार हुआ उच्च–मध्य, मध्य और निम्न वर्ग। इन सबकी आकांक्षाएं बढ़ीं, आवश्यकताएं बढ़ी और अर्थाभाव और बेकारी की समस्या से जूझता हुआ युवा वर्ग पुनः समझौता वादी होने लगा। यहां आकर एक आश्चर्यजनक परिवर्तन नारी समाज में भी दीखने लगा। पुरुष प्रधान समाज में नारी को शोषण से मुक्ति और समानाधिकार दिलाने वाला नारी स्वतन्त्रता का संघर्ष भी धीरे-धीरे बेमानी होता गया। यहां उच्च वर्ग की बात मैं नहीं करता वह तो सदा से ही सुविधा भोगी रहा है, क्योंकि उसके पास अपनी सुविधाओं को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त साधन विद्यमान रहते हैं, पर मध्यवर्ग जो एक आदर्श लेकर चलता है, अपनी संकीर्णताओं से जूझता है, उनका हल खोजता है, वह भी इस युग में सुविधाओं का शिकार हुआ। इस निराशाजनक स्थिति से उबरने के लिए संघर्ष के स्थान पर आधुनिक शिक्षिता नारी भी समझौता वादी हो गई। सामाजिक धरातल पर वर्ग संघर्ष और प्रगति शीलता की बात करते हुए वैयक्तिक जीवन में नितान्त सुविधा-भोगी आचरण करने लगी। किताबी चेतना यदि उसे सामाजिक धरातल पर आकर्षित करती गई तो दूसरी ओर महंगे विदेशी शृंगार प्रसाधन और परिधान उसके आदर्श बने। विरोध का स्वर प्रगतिशीलता की लफ्फाजी के आगे मंद पड़ता गया। आधुनिकताओं ने सुविधापरक जीवन जीने के लिए अपने बाप की उम्र के पुरुषों से सहर्ष विवाह करना प्रारम्भ किया। कारण स्पष्ट था भौतिक सुख और सुविधा। इस प्रकार दहेज प्रथा की क्रान्ति यात्रा जहां से प्रारंभ हुई थी, एक नया रूप लेकर वहीं लौट चली। प्रगतिशीलता के आडम्बर पूर्ण मोहजाल में जिस प्रकार हमारा आधुनिक शिक्षित नारी समाज फंसा है उसका सबसे घिनौना रूप आपातकाल में हुए दिल्ली की आधुनिकताओं के एक सर्वेक्षण में हमारे सामने आया। लगभग चार सौ पचास लड़कियों से दहेज की समस्या के संदर्भ में जब पूछा गया तो जो सत्य सामने आया वह आंख खोल देने वाला था। अधिकांश लड़कियां दहेज के पक्ष में थीं। उनका तर्क था अपने भावी जीवन को सुखमय बनाने के लिए यदि माता-पिता से कुछ सुविधाएं प्राप्त कर ली जाएं तो इसमें अनैतिक कुछ भी नहीं है। कुछ लोगों का तो पति निरपेक्ष रहकर केवल उसकी आमदनी से ही संबंध था।

यहीं पर प्रश्न किया जा सकता है कि क्या यह समस्या केवल नगरीय ही है? उत्तर साफ है। ग्रामीण नारी अभी परम्परा-गत संस्कारों में आबद्ध है। नई शिक्षा से न तो उतनी प्रभावित है और न आर्थिक दृष्टि से गांव का पारिवारिक ढांचा विखंडित होकर शहरी समाज के अनुरूप केवल इकाई में सिमटकर रह गया है। पर यह व्याधि धीरे-धीरे वहां भी बढ़ती जा रही है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यह समस्या केवल सामाजिक और आर्थिक ही नहीं, नैतिक भी है। जब तक देश की युवा पीढ़ी अपने व्यक्तिगत जीवन में दहेज की समस्या को अनैतिक करार नहीं देती, केवल कानून के सहारे उसका हल खोजना नितान्त भ्रामक सिद्ध होगा। इस दिशा में पुरुषों का उत्तरदायित्व निर्विवाद रूप से नारी से अधिक है, नहीं तो अर्थाभाव में पिसता हुआ नारी वर्ग मिट्टी के तेल से जलकर, या कुएं तालाब में डूबकर, अपना अस्तित्व समाप्त करता रहेगा। स्वस्थ जीवन के लिए स्वस्थ जीवन दर्शन चाहिए और वह केवल परिश्रम से और अपनी महत्वाकांक्षाओं पर नियंत्रण रखकर ही प्राप्त किया जा सकता है। केवल व्यवस्था की आड़ में भोग-वाद को बढ़ावा देने से नहीं। ●

बी० 24, रामप्रस्थ,
डा० चिकम्बरपुर,
गाजियाबाद-201006

'भारत-1977-78' (वार्षिक संदर्भग्रंथ)——प्रकाशन; विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, संस्करण--1978——पृष्ठ संख्या 701——मूल्य 15-00 रुपए केवल।

प्रस्तुत ग्रंथ 'भारत-1977-78', भारत सरकार का वार्षिक संदर्भ ग्रंथों के रूप में चौबीसवां प्रकाशन है। ग्रंथ के आरम्भ में 'परिवर्तन का वर्ष' नाम शीर्षक से 1977 की परिवर्तित राजनीतिक स्थिति का विस्तार से वर्णन किया गया है। वर्तमान सरकार की नीतियों को भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। सरकार की राजनीतिक गतिविधियों में भारत सरकार का विवरण प्रस्तुत किया गया। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, अर्थव्यवस्था से संबंधित, वाणिज्य, उद्योग आदि सभी पहलुओं का यथातथ्य प्रस्तुतीकरण हुआ है। हमारे संविधान की स्थिति और संसद का उसमें योगदान भी स्पष्ट किया गया है। इस सामग्री के प्रस्तुत करने में अपेक्षित तथ्य एकत्रित करके ग्रंथ को उपयोगी बनाया है। विशेषता यह भी है, प्रत्येक विवरण या सूचना परिपुष्ट आंकड़ों के साथ दी गई है। इससे ग्रंथ की गंभीरता का पता चलता है। इस ग्रंथ से हमें यह भी विदित होता है कि हमारे जीवन के जितने भी छोटे-बड़े पहलू हो सकते हैं उनकी 1977-78 में क्या-क्या अवस्था रही है वे प्रगति पर रहे या यथास्थान।

ग्रंथ में जनवरी 1976 से 1977 के अंत तक की महत्वपूर्ण घटनाओं का बहुत ही सुन्दर और स्पष्ट लेखा-जोखा दिया गया है। परिशिष्ट में वर्तमान मंत्री-परिषद्, संसद सदस्यों का विस्तृत उल्लेख है: वीरता पुरस्कार, विशिष्ट सेवा पुरस्कार की भी लम्बी और परिपूर्ण तालिका है। भारत के विश्वविद्यालयों की एक विस्तृत और तथ्य गर्भित तालिका है। इसके अतिरिक्त, ललित कला अकादमी, संगीत नाटक अकादमी, साहित्य अकादमी, फिल्म के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार भारत में विदेशी राजनयिक, विदेशों में भारतीय राजनयिक की भी समुचित जानकारी दी गई है। वास्तव में यह व्यक्ति के सामान्य ज्ञान को बढ़ाने में बहुत सक्षम है। अब तक इस प्रकार के ग्रंथ अंग्रेजी तक ही सीमित रहते थे और उनसे सामान्य आदमी लाभान्वित नहीं होते थे। इस प्रकार के ग्रंथों का हिन्दी में प्रकाशन सर्वसाधारण के ज्ञानवर्धन के लिए जरूरी है।

ग्रंथ में ऐसी सामग्री भरी पड़ी है जो अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास तथा राजनैतिक विज्ञान में शोधकर्त्ताओं के लिए बहुत उपयोगी है। अत्यन्त स्पष्ट हिंदी का प्रयोग किया गया। वस्तुतः इतने बड़े ग्रंथ को अत्यल्प मूल्य 15/- रुपए में प्रकाशित करने के लिए भारत सरकार की सराहना की जानी चाहिए।

दिनेश कुमार गुप्ता

पर्वतदेवता : संपादक : राधेश्याम शर्मा, प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या 41, मूल्य : 5 रु०।

बाल वर्ष के उपलक्ष में सरकारी एवं गैर सरकारी प्रकाशनों की ओर से बहुत सा बाल साहित्य उपलब्ध कराया जा रहा है। बाल कहानियों की यह पुस्तक उसी क्रम की एक कड़ी है। इसमें ग्यारह कहानियां संकलित की गई हैं। संपादक का उद्देश्य यही रहा है कि बाल मन को कथा साहित्य के माध्यम से विविध विषयों का ज्ञान हो तथा उन्हें सही दिशा मिल सके।

संग्रह में कुछ कहानियां पौराणिक, कुछ विदेशी तथा कुछ सम-सामयिक सच्ची घटनाओं की हैं। किस प्रकार से एक बालक राष्ट्र प्रेम की बलिवेदी पर अपने प्राणों को 'न्योछावर' कर देता है, यह अंटेश के चरित्र में देखा जा सकता है। पर्वत देवता में भारत की लौकिक कथा है। इसमें विमाता के व्यवहार से पीड़ित बालिका इला के चरित्र की महानता है।

सामाजिक जीवन में किस प्रकार से आज के ठग, बालकों का अपहरण करते हैं, इस आधार पर भी दो सच्ची कहानियां पठनीय हैं। "साहसी बालक" तथा 'बोरी के पैर' कहानियों में ग्यारह वर्षीय बालक मुकेश और बालिका लवीन्द्र की साहसिकता का परिचय दिया गया है। पौराणिक कहानियों में 'जब वे पहली बार आये', 'दान की महिमा', 'सेवा का फल' आदि कहानियां भी बालकों के जीवन को नई दिशा एवं मार्ग दर्शन प्रदान करने वाली हैं।

पुस्तक को बड़े आकार में मोटे टाईप में छापा गया है। यह पुस्तक बाल पाठकों के लिए ही नहीं बल्कि प्रौढ़ों तथा नव साक्षरों के लिए भी पठनीय और मननीय है।

डा० शीतांशु भारद्वाज

बिहारी सार्धशती : सम्पादक; डा० ओम प्रकाश, प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली-6, पृ० संख्या 160, मूल्य : 12.00 रु०।

रीति काल के सिद्ध-समर्थ सुकवि बिहारी की 'सतसई' सदा से साहित्य प्रेमियों की रुचि का शृंगार बनी रही है। इसी 'सतसई' के लगभग पांचवें हिस्से के बराबर 145 दोहों को डा० ओम प्रकाश ने 'बिहारी सार्धशती' में संकलित किया है। दोहों का चयन करते समय डा०ओम प्रकाश ने बिहारी के साहित्यिक गुणों की गरिमा का प्रतिनिधित्व करने वाले दोहों को तो रखा है किन्तु उन दोहों से बचने की चेष्टा भी की है जो शृंगार की

अतिशयता के कारण छात्र-छात्राओं में पठन-पाठन का विषय नहीं बन पाते। कम समय में अधिक से अधिक बिहारी को हृदयंगम किया जा सके, इस नाते 'बिहारी सार्धशती' संकलन सफल समझा जा सकता है।

संकलित दोहों की मर्मोद्घाटिनी व्याख्या भी डा० ओम प्रकाश ने इसमें प्रस्तुत करके पाठकों के हित में तृप्ति प्रदायी कार्य किया है। बिहारी के कथ्य को समझने-बूझने में तो यह व्याख्या सहायक है ही, साथ ही कवि के काव्यत्व, उसके युग-धर्म आदि की पहचान भी इससे बखूबी हो जाती है। भूमिका में व्याख्याकार ने लिखा है—'प्रस्तुत व्याख्या में हमने बिहारी के परिवेश और समाज तक जाने का प्रयत्न किया है और दोहों को सामाजिक संदर्भ में समझने की चेष्टा की है।' सामाजिक संदर्भ में दोहों के अर्थ की प्रस्तुति निश्चय ही कवि को एक नई अर्थवत्ता प्रदान करती है। कुछेक दोहों (उदाहरणार्थ दोहा सं० 114, 125 आदि) में सामाजिक परिवेश की पहचान पिछड़ भी गई है। व्याख्या करते समय डा० ओम प्रकाश का वाचिका-भेद' हाव-भाव, संचारी भाव, अनुभाव, अलंकार आदि शास्त्रीय विवेचन की ओर कम से कम रहा है। शास्त्रीयता से बचने की प्रवृति शुभद और सुखद दोनों ही रही हैं क्योंकि अधिकतर व्याख्याकार किसी भी कवि के छन्दों की लम्बी-चौड़ी व्याख्या शास्त्रीयता के चश्में से कर तो दिया करते हैं किन्तु उस घटाटोप में कवि का अभिप्रेत अमूमन दब जाता है या फिर उस छन्द की व्याख्या कवि से अलग-थलग जा पड़ती है। ये दोनों ही स्थितियां कवि की पहचान करा सकने में असमर्थ होती हैं।

व्याख्या के इस क्रम में डा० ओम प्रकाश का समीक्षक रूप भी उद्घाटित होता रहा है। दोहों की व्याख्या में कवि के वैशिष्टय की परख भी होती गई है। व्याख्याकार ने कहा है—"सतसई का तुलनात्मक अध्ययन अपने आप में विस्तृत विषय है, विद्वानों ने उस प्रकार का अध्ययन किया भी है। प्रस्तुत व्याख्या में उस प्रकार की तुलना से मुक्त है, तुलना केवल आतंरिक है।" व्याख्या को समीक्षा की सहजीवी मान कर ही डा० ओम प्रकाश ने बड़े कौशल से एक-एक दोहे की व्याख्या में प्रकारान्तर से किसी न किसी रूप में बिहारी की समग्रता का मूल्यांकन भी प्रस्तुत कर दिया है।

'सार्धशती' में बिहारी का जो बोध होता है, वह निश्चय ही तृप्ति-प्रदायी साबित होगा। बिहारी के अध्ययन-अध्यापन में यह पुस्तक विशिष्ट महत्व की मानी जायेगी।

प्रो० विश्वंभर 'अरुण'

सैयद अहमद खां (जीवनी) : लेखक

खलील अहमद निज़ामी : अनुवादक : केशव गोपाल निगम : प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना—प्रसारण मंत्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली : संस्करण : 1978 मूल्य 6.25 पैसे, पृष्ठ संख्या : 158।

लेखक की मान्यता है कि मध्ययुग से ले कर आधुनिक युग तक के भारत के इतिहास में सैयद अहमद खां का एक प्रमुख स्थान रहा है, जिन्होंने रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, अकर्मण्यता और अज्ञान के खिलाफ डटकर मोर्चा लिया था। आधुनिक भारत के निर्माण में उनका योगदान महत्वपूर्ण है।

समीक्ष्य पुस्तक—प्रस्तावना, वंशपरम्परा जन्म और प्रारंभिक जीवन, सरकारी नौकरी, इग्लैण्ड की यात्रा, शिक्षा प्रसार आंदोलन, समाज सुधार की भूमिका में, साहित्यिक सेवाएं, धार्मिक चिंतन, राजनैतिक विचार और गतिविधियां अंतिम वर्ष, व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव—इन ग्यारह उपशीर्षकों में व्यवस्थित है।

जब 17 अक्तूबर 1817 में दिल्ली में श्री सैयद अहमद खां पैदा हुए थे, तब वह दिल्ली देश के सामने 1857 से पूर्व की दिल्ली थी। श्री अहमद के व्यक्तित्व को रंगने और निखारने वाली गालिब, शाह गुलाम अली, सैयद अहमद शहीद, रुहबाई और मोमिन की दिल्ली थी, जो एक ओर तो समृद्ध संस्कृति की झांकी प्रस्तुत कर रही थी, तो दूसरी ओर भयंकर आर्थिक संकट की विभीषका पेश कर रही थी। अहमद ने अपनी आंखों से तुगलकाबाद के पास गांव में मुहम्मद बिन तुगलक के वंशजों को जमीन जोतते देखा और शाहजहां के एक प्रमुख अमीर नवाब खलील उल्लाह खां के पोते को लोगों के घरों में काम कर के पेट पालते देखा था।

विद्वान लेखक ने जीवनी-नायक की रचनाओं से, भाषणों से, ऐसे अनेक तथ्य प्रस्तुत किए हैं जो उनके बारे में फिर से सोचने के लिए विवश करते हैं। लेखक ने विश्वासपूर्वक कहा है कि 'लोगों के सामाजिक और बौद्धिक उत्थान के लिए सैयद अहमद खां ने जिन हालातों में अपना आंदोलन शुरू किया था, वे बड़े विषम थे। उन्होंने देखा कि 'मुस्लिम शिक्षा का परम्परागत तरीका प्रगति के रास्ते में सबसे बड़ा रोड़ा था।.... हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमान समय से बहुत पीछे थे। सबसे पहले सैयद अहमद खां मैदान में उतरे। (पृ० 7) स्वयं अहमद ने लिखा है कि—'पतन इतनी तीव्रगति से आरम्भ हो गया था कि प्रतीत होता था कि कुछ ही वर्षों में मुसलमान कहीं नजर नहीं आएंगे, सिवाए अस्तबल और बाबर्चीखानों में काम करते हुए या घास छीलते हुए।' (लैक्चर्स, पृ० 244, पृ० 5 पर उद्धृत)।

यह तो सच है कि मुसलमानों की सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक दशा सुधारने के लिए सैयद अहमद ने अनथक प्रयत्न किया, किन्तु मुसलमान भी तो इसी देश के वासी थे। उनके इस प्रयत्न से सभी भारतीयों की प्रगति और कल्याण में कहां बाधा पड़ती है? सन् 1884 में 'इण्डियन एसोसिएशन आफ लाहौर' की सभा में भाषण करते हुए उन्होंने कहा था—'मुझे बड़ा दुख होगा यदि कोई यह समझता है कि इस कालिज (मुहम्मडन एंग्लो ओरिएंटल कालिज, उद्घाटन 24 मई 1875 अलीगढ़) की स्थापना हिन्दुओं और मुसलमानों में भेद करने के लिए की गई है।

सैयद अहमद ने सन् 1869 में इंगलैण्ड की यात्रा की थी। इंगलैण्ड में उनके राष्ट्रीय स्वाभिमान को तब बहुत गहरी ठेस पहुंची थी, जब उन्होंने इण्डिया आफिस लायब्रेरी में एक सचित्र

(शेष पृष्ठ 31 पर)

पहला सुख निरोगी काया

पेट दर्द, उसकी होम्योपैथिक चिकित्सा

* डा० बी० पी० मिश्र

पेट दर्द के अनेक कारण होते हैं । लीवर में, गुर्दे में, आंतों में, पेट में खराबी के कारण पेट में दर्द हो जाया करता है। उन्हीं का इलाज लक्षण के अनुसार दिया जा रहा है :

नक्स वोमिका-6-30 :

अपच के कारण पेट में दर्द, मसालेदार खाना खाने के कारण, पतले दस्त आते हैं। दस्त के बाद दर्द कम हो जाता है ।

मैगाफौस 6.30 :

पेट का दर्द गर्म सेंक से कम हो, दबा कर बैठने से या पेट के बल सोने से भी कम हो। गम पानी में 4 गोली मिला कर आधे-आधे घंटे के अंतर पर लें, जब तक कि दर्द कम न हो जाये ।

चेलिडोनियम 6.30 :

पेट के उपरी दाहिने हिस्से में दर्द । दर्द पीठ की तरफ एवं दाहिने कंधे की ओर जाये। पेट के दाहिने उपरी हिस्से में हाथ से दबाने से दर्द अधिक हो। 6 घंटे अन्तर पर दें ।

बेलाडोना 30 :

दर्द पेट के किसी भी भाग में हो। दर्द रुक रूक कर तेजी से होता हो एवं तेजी से चला जाता हो। पेट से हवा बाहर नहीं निकल रही हो। आधे घंटे के अंतर पर दें।

फल्केरिया कार्व 30 :

बेलाडोना से लाभ नहीं हो और लक्षण उसी के हों तो बेलाडोना के बाद इसे लें । 2 घंटे के अंतर पर ।

बरबेरिस 30 :

पेट के किसी भाग में दर्द आरम्भ होकर चारों ओर फैल जाए अथवा बांयीं ओर पीठ अथवा उपरी पेट के हिस्से में आरम्भ होकर नीचे जांघ तक आये। मूल अर्क (Q) की 10 बूंदें पानी में मिलाकर आधे घंटे के अंतर पर दें। इसका लाभ न हो तो 30 शक्ति की दें। दर्द के साथ-साथ पेशाब में कष्ट, दर्द-जलन भी इसके लक्षण हैं।

लाइकोपोडियम 30.200 :

पेट के दाहिने उपरी हिस्से में दर्द। पेट में गैस के कारण अथवा दाहिने गुर्दे में प्रदाह अथवा पथरी के कारण दर्द हो। दर्द ऊपर से नीचे तक पेशाब के रास्ते तक आता है। पेशाब में रेत के छोटे छोटे कण जाते हों।

चाइना 6 :

पेट में गैस के कारण दर्द। पेट में भारीपन का महसूस होना। तीन दफा रोज लें।

कालोसन्थि 200 :

दर्द दबाने से कम हो। सामने झुक कर बैठने से कम हो। दो दफा रोज लें।

रस टाक्स 6.30 :

पेट के निचले दाहिने हिस्से में दर्द। उस भाग को हाथ से दबाने से दर्द अधिक हो। दर्द के साथ-साथ उल्टी हो। 4 घंटे पर लें।

ब्रायोनिया 30 :

कब्जी के कारण दर्द हो। गोल-गोल गुटलियों जैसी टट्टी हो। तीन दफा रोज लें।

प्लंबम 200 :

नाभि के चारों ओर दर्द हो। कब्जियत की शिकायत रहे। एक दफा रोज।

कैली कार्व :

कब्जियत के साथ पेट के बायें निचले हिस्से में दर्द। दर्द कमर में भी हो। एक दफा रोज लें।

सल्फर 30 :

पेट के बायें निचले हिस्से में दर्द। कब्जियत भी साथ में हो। टट्टी के रास्ते में जलन। सवेरे शाम लें।

डी० 770, मंदिर मार्ग
गोल मार्केट, नई दिल्ली-1

वर्षा ऋतु का प्रधान रोग कृमि

* वैद्य रघुनन्दन प्रसाद साहू

यूं तो कृमि का रोग सारे साल लोगों को कष्ट देता रहता है पर वर्षा ऋतु में इसका प्रकोप और भी अत्यधिक हो जाता है । वर्षा के कारण नदी-नाले और गढ़ों में पानी के सड़ने से कीड़े-मकोड़ों की वृद्धि हो जाती है । और कृमि लोगों को रोग का शिकार बना लेते हैं । दूसरी ओर भगवान भास्कर, जो कि अपनी प्रखर किरणों से इनको मारने का काम कर सकते थे, वे भी कई कई दिनों तक दर्शन नहीं देते । अतः प्रकृति भी उन कृमियों की वृद्धि में गौण रूप से मदद करती है । इसके अतिरिक्त रात-दिन वर्षा होते रहने के कारण मनुष्य भी अपने घरों से बाहर नहीं निकल पाते हैं, अतः उन्हें अपने घर में पड़े हुए सड़े-गले अनाज को ही खाकर संतोष करना पड़ता है । उपरोक्त तथ्यों के अलावा घर के चारों तरफ पानी ही पानी होने के कारण सफाई-स्वच्छता का अभाव हो जाता है जिससे और अधिक कीड़े-मकोड़े पैदा होते हैं ।

यूं तो विभिन्न प्रकार के कृमि रोग होते हैं और उनके लक्षण भी विभिन्न प्रकार के होते हैं। पर सभी कृमि रोगों के सामान्य लक्षण निम्नलिखित हैं :—

ज्वर : सभी तरह के कृमि रोगियों में थोड़ा बहुत ज्वर हमेशा पाया जाता है । इसके अलावा उदरशूल अर्थात पेट में दर्द, बार बार पतली टट्टी, भोजन करने की इच्छा शक्ति का अभाव, शरीर के प्रत्येक हिस्से में काम करने की शक्ति का अभाव, चक्कर आना,

शरीर का रंग बदल जाना हृदय की दुर्बलता हो जाना आदि । कृमि रोगी के रक्त को चूसकर उसकी पाचनाग्नि को मंद करके उसे कमजोर कर डालते हैं ।

उपरोक्त लक्षण किसी भी मनुष्य में मिलते ही इसे कृमि रोग हो गया है ऐसा समझा जा सकता है और उसके निवारणार्थ निम्नलिखित औषधियां दी जा सकती हैं ।

कवीला के चूर्ण को चार और आठ रत्ती की मात्रा में मधु के साथ चटाने पर सभी तरह के कृमि रोगों से मुक्ति मिलती है ।

वायविडंग का चूर्ण भी एक से दो मासे की मात्रा में गरम पानी से सुबह शाम खाने से कृमि रोग से मुक्ति मिलती है । कोटमारी का चूर्ण या फांट भी सभी प्रकार के कृमि रोगों से छुटकारा दिलाता है । अनारदाने का छाल का काढ़ा दो से चार तोले की मात्रा में सुबह-सुबह खाली पेट पीने से कृमि नष्ट हो जाते हैं । कृमि मुदुर रस की बनी बनाई दो गोली सुबह और दो शाम को खाने से कृमि रोग दूर हो जाता है । यह एक सुप्रसिद्ध योग है । जिस रोगी को कृमि ने अत्यधिक दिनों से ग्रसित किया हुआ हो और उसके रक्त को चूसकर उसे रक्तहीन बना दिया हो ऐसे रोगी के लिए विडंगादिलोह एकमात्र औषधि है । यह कृमि को दूर करने के साथ-साथ उसके रक्त की कमी को भी पूरा कर देती है । विडगासव भी वायविड़ग के साथ अन्य औषधियों के सम्मिश्रण से बनता है तथा पीने से कृमि रोग को दूर करता है ।

एरंड तेल को प्रतिदिन रोगी को सुबह एक से दो तोले तक गरम दूध या गरम पानी में मिलाकर खाली पेट पिलाना चाहिए जिससे पतले दस्त आकर कृमि पेट से निकल जाते है । ●

समीक्षा

सैयद अहमद खां जीवनी (पृष्ठ 29 का शेषांश)

पुस्तक पढ़ी जो भारतीयों के रीति-रिवाजों के बारे में थी और जिसमें भारतीयों को बिल्कुल बर्बर-जंगली दिखाया गया था।

सैयद अहमद ने अंग्रेजी शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए भी प्रादेशिक भाषाओं को भारत की उन्नति के लिए आधार बताया है। इस संबंध में उन्होंने तत्कालीन वायसराय को सन् 1867 में एक ज्ञापन भी दिया था, जिसमें भारतीय भाषाओं की उन्नति एवं भारतीय भाषाओं में परीक्षाएं दिलाने का प्रबन्ध कराने का विशेष रूप से आग्रह था।

संक्षेप में कहा जाए तो यह कह सकते हैं कि सरसैयद अहमद खां उन्नीसवीं सदी के अत्यन्त कर्मठ और देदीप्यमान हस्तियों में से थे जिनके कर्मशास्त्री, विद्वान, समाज सुधारक, शिक्षाविद, राजनीतिज्ञ, लेखक-पत्रकार आदि कई रूप थे।

प्रस्तुत पुस्तक तथ्य-ग्रहण, विचार-संचयन तथा श्री अहमद की आन्तरिक चेतना एवं उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व तथा कृतित्व को समग्रता से प्रस्तुत करने में एक सक्षम प्रयास माना जा सकता है । भाषा कौशल इस पुस्तक के उदाहरणीय गुण हैं। इसकी कम कीमत हिंदी पाठकों के प्रति सहृदयता ही कही जाएगी । आकार-प्रकार और सज्जा सादगीपूर्ण किन्तु आकर्षक है। विश्वास है कि जीवनी-साहित्य, राजनैतिक चेतना और श्री सैयद अहमद खां की तत्कालीन परिस्थितियों को समग्रता से जानने के लिए पुस्तक मूल्यवान सिद्ध होगी।

डा० रमेशचन्द्र मिश्र

बहता पानी निर्मला : लेखक : भागीरथ कानोड़िया, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, मूल्य: छः रुपये; पृ0 संख्या : 322

बहता पानी निर्मला में एक सौ एक कथाएं संगृहीत हैं । कथाओं को बोध कथाएं, लोक कथाएं, कहावतों की कथाएं, ऐतिहासिक कथाएं एवं मनोरंजक कथाएं शीर्षकों में विभाजित किया गया है ।

बोध कथाएं इस पुस्तक की प्राण हैं । वे सजीव और प्रेरक हैं । प्रत्येक कथा से कोई न कोई शिक्षा मिलती है । 'कंजूसी बुरी', 'परिग्रह', 'लाभ का परिणाम', 'सेवा बिन विद्या नहीं', 'कुलधर्म' आदि कथाएं चरित्र निर्माण की दृष्टि से महत्व-पूर्ण हैं ।

इस संग्रह की लोक कथाएं सामान्य लोक कथाओं से कुछ भिन्न कोटि की हैं । उन कथाओं को प्राथमिकता दी गई है, जिनसे जन-मानस की झांकी मिलती है । लोक कथाओं की विशिष्टता अर्थात् कुतूहल और रोचकता प्रत्येक कहानी में विद्यमान है । लेखक एक ही शीर्षक के अन्तर्गत विचारसाम्य के आधार पर कई प्रसगों का उल्लेख करने में सकोच नहीं करता । 'ज्ञान की कलगी' 'राजा भोज और चार चोर', 'बहन का महत्व' 'जननी जन्मभूमिश्च' आदि कथाएं लोकमंगल तथा रसास्वादन की दृष्टि से सटीक हैं । कहावतों पर आधारित कथा कहानियों की इस पुस्तक में सर्वाधिक बहुलता है । लेखक के पास कहावतों का अक्षय भण्डार है।

ऐतिहासिक कथाओं में मुख्यत: राजस्थान का इतिहास अनुस्यूत किया गया है । इस इतिहास में त्याग, बलिदान और शौर्य की अनेक गाथाएं भरी पड़ी हैं लेखक ने बड़ी कुशलता से इस वर्ग की सामग्री का चुनाव किया है ।

शब्दों के प्रयोग तथा कथावस्तु के चयन में इस बात का ध्यान रखा गया है कि राजस्थानी भाषा से अनभिज्ञ पाठकों को असुविधा न हो । वाक्य छोटे-छोटे चुटकीले एवं मजेदार हैं। पुस्तक का शीर्षक अत्यन्त आकर्षक एवं नवीनता लिए हुए है । यदि कहानी कला की दृष्टि से समीक्षा न करें तो पुस्तक पठनीय है ।

डा० भक्त राम पाराशर

कहानी

कमजात ※ बाला शर्मा

माथे पर तनिक सा घूंघट हो और हाथ भर घेरे का लहंगा पहना हो तथा रक्तिम लाल होठों में बीड़ी दबाए कोई स्त्री कश पर कश खींच रही हो तो कैसा प्रतीत होता है । वास्तव में कितना हास्यास्पद लगता है, यह उस स्त्री को देख कर ही जाना जा सकता है। मुख कभी चन्द्रमा के समान स्निग्ध ज्योति बिखेरता होगा, किंतु आज तो चेहरे की लुनाई राख के रंग में परिवर्तित हो गई है। हाथ पांव सूखकर मैल की पर्त अधिकार जमाएं बैठी है। हाथ-कान सब श्रीहीन केवल कोटर में धंसे दोनों नेत्र दीये के समान टिमटिमा कर जल रहे हों ज्यों । जात-गोत से विमुख वह स्त्री किस प्रकार भर्त्सना का पात्र बनी निस्पृह भाव से सब कुछ झेल जाती है यही आश्चर्य का कारण है ।

क्रांति को इसी आश्चर्य से अविभूत होना पड़ा था । जब प्रथम बार गांव आई थी तब वह सोलह-सत्रह वर्ष की अल्हड़ किशोरी थी, किन्तु आज तो कलंक का लेबल माथे पर लगाए अत्यंत दीन-हीन स्थिति लिये जन मानस में घूम रही है, कोई पल भर को पास नहीं टिकने देता किन्तु क्रांति इस सब अपवाद से परे है । उसे तो वह निष्कपट और भोला मुख अनायास ही आकृष्ट कर जाता है । फिर यह भी निश्चित नहीं कि जो दोष उसे दिए गए हैं उनमें सत्य कितनी मात्रा में है । वास्तव में तो कहानी उतनी दुरूह नहीं । यह तो चिरंतन सत्य है कि जो निर्बल है दुख: उसी के भाग्य में है ।. नाम था उसका लाडली अथवा लाढ़ो किन्तु पुकारते हैं सब 'लट्टू' । लट्टू यानी जिसके चारों ओर कस कर डोरी लपेट दी जाए और मन चाहा उसे नचाते रहो और वह स्वयं ही एक ही धुरी पर नाचता रहे तथा अनजाने ही बहुत गहरा बहुत बेधक सा निशान छोड़ दे ऐसी ही थी 'लट्टु'। उसकी वह दिये की लौ सी जलती आंखें, स्वत: ही विपरीत पक्षी को अंतर में उतर कर विचारने पर विवश कर देती है ।

"क्यों री लट्टू कभी तुझ से भी बात करता है तेरा मरद" क्रांति ने उसके मन की पर्तें उघाड़ने हेतु प्रश्न किया ।

"ही..ही..ही । इब के बोलेगा भैन जी । सहसा उसके नेत्र छलछला जाते हैं । फिर स्वयं बीती यातनाओं के पन्ने पलटने लगती है तो कब सवेरे से दोपहर का सूर्य उग आया भान ही नहीं होता ।

"किन्तु कारन क्या था लट्टू जो उसने ऐसा अन्याय किया तेरे साथ ?"

"कारन ? कारन पूछो भैन जी तुम क्या विश्वास कर लोगी ?" हताशा से चेहरा विवर्ण हो गया है । कुछ पल नेत्र मूंद कर रुलाई का वेग रोकती रही किन्तु यत्न करने पर भी आंसू नहीं रुक सके तो चुप चाप उठ कर चली गई ।

प्रथम बार जब उसे देखा था तब उसकी आयु रही होगी सोलह या अठारह वर्ष । कच्ची बेल सा लहराता कद चिट्टा मक्खन सा रंग और कजरारे नेत्र । चारे का भारी बोझा माथे पर रख धमक कर पांव रखती तो झांझर झम झम बज उठतीं । दिन रात के अथक परिश्रम से अंग–अंग सौष्ठवपूर्ण था । प्रात: भोर का तारा डूबने पर उसकी दिनचर्या प्रारंभ होती तो रात में तहसील का घंटा जब बारह बजे का गजर बजाता तभी सांस लेती थी । घर में बुढ़िया सास, जेठ, जिठानी, खलिहान में नई फसल की सोंधी महक गाय, बैल चहु ओर मौज मस्ती । माह, पूस, जेठ, बैसाख, ऋतु बदलती जाय वह घर द्वार निरंतर परिश्रम करती रहे ।

सहसा सवेरे सवेरे एक दिन जी मिचला उठा, पेट पकड़ कर बैठ गई । अंधी सास ओसारे में सोई पड़ी थी । तुरंत उठ बैठी ।

"के हुआ...के हुआ...बेटी?" सास ने हौल भरे स्वर में पूछा ।

"कुछ ना मांजी यूं ई जी घबरा गया"

"इंगे तो आ" सास ने पास बुलाया माथे पर हाथ फिराते कुछ प्रश्न पूछती रही लट्टू लजाकर बताती रही तो बुढ़िया की अंधी आंखें भी प्रसन्नता से छलक उठीं ।

"इब तू खेत नै ना जइये" रात में उसके पति ने उसे अंक में सिमेटते हुए कहा । हिया सुख के हिलोरे लेने लगा ।

जिठानी का हिया झुलस गया बारहवां आषाढ़ उसके ब्याह को लगा था और वह अपनी सूनी कोख लिए मंदिर चौबारे की मिट्टी छानती घूम रही थी । जेठ हुक्के की नली मुंह में दबा, आती-जाती स्त्रियों पर दृष्टि फेंकता तो लट्टू को घृणा होती किन्तु व्यर्थ के बखेड़े में क्या लाभ । उसे तो ब्याह कर आए तीन बरस हुए किसी ने गली चौबारे अनावृत मुंह (मुंह उघाड़े) नहीं देखा तो फिर दुर्भाग्य की यह छाया यह कलंक कथा उसके माथे कहां से लगी ? होतव्यता नहीं तो और क्या ? क्रांति के प्रश्न करने पर

वह निरुत्तर उठकर चली आई । "इब के बताऊं इंगै उघाडू तो अपनी लाज उंगै उघाडू तो भी अपनी" । सासु जी के आंख का तारा बणी थी नौ माह बीते बिदन का चंदा की किरन सा माथा उसके सुख में चार चांद लगा गया । गांव गली के सब उसके भाग्य से ईर्ष्या करे और उसका धनी तो बार बार पानी पिए था । जो हत्यारा जेठ उसका बैरी बना सो उस दिन सो आज दिन कैसी-कैसी दुर्गत हुई उसकी" मुंह में बुद बुदा कर कांपते पांव रखती स्वयं ही उठकर चला गई ।

"काकी जी इसकी ये गत कैसे हो गई?" क्रांति ने काकी सास से रहस्य-मय स्वर में पूछा ।

"होना के था बहू इसने अनहोनी करी थी, अपने आदमी ने छोड़ जेठ तै जा अड़ी" मुंह बिसूरते हुए उन्होंने घृणा से रहस्यमय स्वर में कहा तो क्रांति ने लज्जा से जीभ दांतों तले दबा ली ।

लट्टू जाते कदम सहसा हिटक गए पीठ पीछे होने वाली निन्दा के चंद शब्द उसके कानों में विष घोल गए थे इसमें संशय नहीं । "इब या हवेली वाली बहू भी उसतै आंख ना मिलानै की" कलेजे पर कसक लिये मन ही मन सोचती चली गई । राह गली उसे मनफूल मिल गया ।

"घर में पांव ना टिकै···कम जात, दांत पीसते हुए पति ने संज्ञा सर्वनाम दुहरा दिये । वह सहम कर किनारे हट गई कि गंडासे का हाथ उसके ही ओर न उठ जाय । कोई दया माया नहीं । दया ही की होती तो क्या ये दशा बनती--उसका (धनी) पति तो उसपै बार बार पानी पीवै था ।

चटक लाल रंग की गोटा लगी ओढनी हाथ भर घेर की घाघरी और सेर पक्के चांदी के कड़े मोर पंखी कढ़ी हुई जूती पहन वह रोटी ब्यालू ले खेत जाया करै थी । गांव ग्रामीण लोग लुगाई बट्टा करें ।

"अरे धरती पै पांव ना पड़ै मनफूल की घरवाली के । लाल भभूका रंगत निकल रही है । कहीं मैली ना पड़ जाय ।"

और सच्ची में ही वह मैली पड़ गई । इतनी दुर्गत होणी है कदि सपने में भी नहीं सोचा था । बिन्दन बरस दिना का रहा होगा तब झमक कर मलाई भर दूध बिलोती, तीन तीन मटके भर पानी धमक कर ले आती, रसोई पलहंडी, सब अगर मगर नन्हा बिन्दन सासू जी के गले लगा नींद में ही मीठी हंसी बिखेरता तो लट्टू का मन पुलक उठता, तन प्राण सब बिन्दन में बसे रहते और वह अनथक परिश्रम करती चली जाती । आज क्रांति बहू क्या विश्वास कर लेगी कि उसका धनी (पति) गले से कौर नहीं उतारता था जो लट्टू पंखा झालती सम्मुख ना बैठी हो ।

अपनी धुन में खोई दीन दुनियां से निर्लिप्त चली जा रही थी कि उसके जेठ की हंसी बर्छी सी कानों को बेध गई, चौपाल पर चौकड़ी जमाए व्यंग कटाक्ष कर आती-जाती स्त्रियों को जाल में समेटने का यत्न कर रहा था, उसकी गिद्ध दृष्टि से स्वयं को छुपाती अपनी तार-तार हुई ओढ़नी से अनावृत अंगों को ढांप वह कोठरी की ओर चली गई ।

"दई मारा इसमै बीजुरी पड़ै" मुंह में अनर्गल प्रलाप जारी था । मन का पक्षी उस घटना के चक्रवात में फंसा था । "यही कोठरी तो थी" सहसा याद कर वह सर से पांव तक कांप-कांप जाती है । सब कुछ चल चित्र सा नेत्रों के समक्ष घूम जाता है ।

गोधूली का अंधकार अभी फैला नहीं था लट्टू गाय बैलों को चारा डालने कोठरी में भुस का टोकरा भर रही थी कि पीछे से सांकल बज उठी । मुंह फिरा कर देखा तो अंधेरा घुप । कुछ भी समझ में नहीं आरहा था । सहसा किसी भारी चौड़ी हथेली ने उसका मुंह दबा दिया कि मुंह से बोल भी न फूटे किन्तु लट्टू क्या मैदा की लोई थी । दोनों दुहत्थड़ बांध छाती पर हाथ मारा तो सिर पीछे दीवार से जा टकराया । "हाय मर गया···आ" यह उसके जेठ की आवाज थी ।

"हाय के गजब उसका अपणा जेठ बापू··भाइयां सरीखा·· "लट्टू द्वार खोल सर पर पांव रखकर भागी··· नहीं तो न जाने कितना अनर्थ हो जाता कैसी गत होनी थी । "हूं··· पण गत तो होणी ही थी···।" टहर···कमजात कमीणी । म्हारा पैई ओन्ना गेरना था"। आगे आगे लट्टू और पीछे जेठ को दौड़ते देख भीड़ इकटठी हो गई । सब कोई थू···थू··· करें ।

"हाय के होणो है । कुण सा धरम धोरा बचि गयो ।"

"लुगाई की जात घणी सिर चढ़ी याई तौ करैगी ।"

"इस मनफूल की तो मत मारी गई । और मरद हो तो काट कै धरिदै ।"

और सत्य ही काट कर ही रख दिया था उसका शरीर क्षत विक्षत कर दिया । कोने में खड़ी लाठी उसके हाथ आ गई थी सारी देह तोड़ दी । चूड़ी टूट कर हाथ पांव में चुभ गई । ओढ़नी तार-तार हो गई । बिन्दन बिलख-बिलख कर रोता रहा । सास ने जिठानी ने जी भर कर धुनाई की । लट्टू सूजी हुई देह लिये कई दिन तक हिलने योग्य भी नहीं रही ।

देर सवेरे उसके भाइयों को समाचार भेज दिया गया । दूसरे दिन ही आ धमके न आव देखा न ताव झोटा पकड़ फिर से वही दुर्दशा "मैं कुछ नी करया बीरा । मैं थारी काली गऊ तै सच्ची झुठी न सुनै" मार खाती गाय के समान आर्त स्वर में रोती रही । किन्तु कौन किसकी सुनता है । पिता, भाई, पति अथवा जेठ । शाश्वत सत्य है नारी तो नारी है, इनकी दया दृष्टि पर पलने वाली निकृष्ट भला उसका स्वयं का भी व्यक्तित्व जैसी कोई वस्तु हो सकता है ।

"काई कूआ पोखपर में डूब मर" ऐसा आदेश दे वे मां जाए चले गए । पौरुष के दर्प में डूबे अभिजात कुल की दुहाई देते जिसका ठेका केवल उस नारी के ही जिम्मे था जिस पर कोई पुरुष गिद्ध के समान लोलुप दृष्टि जमाए

था और अनजान मैना सी वह उस बहलिये के जाल में फंस गई थी ।

"हूं सच्ची तो कहै । कुआं पोखरा ई तौ अब मुक्ति मिलैगी" वह सहम कर बिना हिले डुले एक ही स्थान पर बैठी ही रही, एक दृष्टि से निहारती रही । किसी ने सहानुभूति का एक शब्द भी नहीं कहा न दिलासा ही दी । मनफूल ने घोर धक्का देने की धमकी दी । लट्टू ने प्रतिवाद नहीं किया ठीक है ऐसा ही तो कुछ वह भी सोच रही थी । अंधेरे में पांव रखती चलती चली गई गली में गिरती पड़ती चली गई, कोई मनाने को भी नहीं आया । किन्तु विधि को यह मंजूर नहीं था । कुए की जण पर पांव रख कर निश्चय अनिश्चय की स्थिति में खड़ी रही । "बस मनै मुक्ति मिली" बापू जी भाई जी राम राम । सासू जी थारा छोरा जीवै । और "बिन्दन" ? हाय म्हारा बिन्दन का कौन म्हारे बिना? वह उलट कर घर की ओर दौड़ती चली गई ।

हाय दिन रात जिसनै कलेजा से लगा के पाला अब कूकर छोड़ के चल दी । गिरती पड़ती ठोकर खाती लौटा पड़ी । तारों ने देखा चंदा की साक्षी थी वह अबला दुर्बल देह की हो गई थी । किन्तु बल की छाया उसके माथे चढ़ गई थी ।

किसी ने द्वार नहीं खोला । वह घर के आमने-सामने चक्कर लगाती रही । पूरी रात बीत गई दिन का चांदना फैल गया । चक्की-चूल्हा सब ठंडा । घर में जिठानी हंडिया पलहड़ी ढूंढती हचक-मचक करती फिरे । सास की हुक्के की चिलम ठन्डी । दूध की बिलोवनी कोने में पड़ी भाग्य को रो रही थी । लट्टू घर की दीवार से लगी बुखार में बेसुध तप रही थी । किन्ही एक दो के मन में दया माया जागी ।

घर वालों को लानत मलामत दी तो घर के किन्हीं कोनों में शरण मिल गई । चार छै दिन में बुखार में तपती रही, बेसुध पड़ी बड़बड़ाती रही "मैं थारी काली गऊ मत मार बीरा मत मार ।"

उसकी सास को दया लगी । नारी का दुख: नारी ही पहचानती है किन्तु जिठानी जान कर अनजान बनी रही । मनफूल भाई का सिखाया पढ़ाया पलट कर देखना भी मुहाल । सास ने कटोरी भर दूध मुंह में डाल दिया, कई दिन की भूखी आंत तिल मिला उठीं, जिठानी ने दो सूखे टिक्कड़ (रोटी) उसके सामने रख दिए बिना हील हुज्जत के खा गई ।

दूसरे दिन से सब पीसना पोना उसके जिम्में दो जून दो सूखी रोटी साथ में उपेक्षा भर्त्सना दुर्व्यवहार, मनफूल मुंह से भी न बोले न उसके हाथ की बनी खाय । जिठानी की चढ़ बनी उसकी सूनी कोख की टीस के बदले और ईर्ष्या की आग में सुलग उठी । सांझ से सवेरे-सवेरे से सांझ बिन बोले काम काम हर घड़ी हर पल लट्टू वास्तव में ही लट्टू बन गई ।

किन्तु अन्त यहीं नहीं था । एक दिन सुन पड़ा धरती बेचने जैसा स्वर, मनफूल इतर का फाया कानों में लगा मूंछों में हंसी बिखेरता घोड़ी चढ़ कहीं गया तो लट्टू का माथा ठनका ।

"हाय किसान की धरती बिकी तो के बचा ?" किन्तु धरती बिकने का कारण क्या था इसका जब तक भेद खुला अनहोनी हो चुकी थी ।" लम्बी चोड़ी काले रंग की जो स्त्री मनफूल धरती बेच कर ले आया था वह उमर में आयु में भी अधिक थी ।

"हा....हा....उसका धनी (पति) भी पराया...इब तो सब आस गई ।" लट्टू कोठे के सामने चक्कर लगाती रही और अंदर सुहाग रात मनती रही ।

बिन बोले बिना कुछ कहे काम करती जाय । सोचे तो सोचती जाय बिटर-बिटर ताकती रहे तो पलक झपकना भूल जाय । कई कई दिन बिना भोजन बिता देती न सुख का आवेग न दुख: का संवेग । चारे का गट्ठर बेच बनिये से बीड़ी खरीद ली कितनी ताड़ना बेंत पूजा झेलनी पड़ी थी, कोई लेखा-जोखा नहीं । बीड़ी सुलगा कर धुंआ अंदर ही घोटती रहेगी । कलेजा जला कर राख कर देगी जितनी जल्दी भी हो सके अब कुछ नहीं बिचारना किसी को बिना नहीं । सब कुछ आग है, धुंआ लपटे सारा गांव सारा घर उसमें फुंक कर राख हुए जा रहे हैं । लट्टू बन गई है जली फुकी अधजली मृत काया स्वयं का घिनौना रूप लिए ।

क्रांति को गांव गए बहुत समय हो गया एक नन्हे के आने की सूचना है । काकी सास को आग्रह पूर्ण पत्र उसने भेज दिया है । उस दिन लँच पर जब नरेश आए तो एक सूचना उन्होंने दी ।

"सुना तुमने क्रांति वह औरत थी न जो गांव में तुम्हारे पास बहुत आती थी भाग गई ।"

"कैसे...क्यों किसने कहा तुमसे ।

"कहेगा कौन काका की चिट्ठी जो आई है ।"

"ए......विश्वास नहीं होता ।"

"क्यों होगा तुम्हारी सहेली जो थी ।" व्यंग की पैनी धार क्रांति को अंतर में छील गई थी ।

एक दिन बीतने पर काकी सास गांव से आई तो रहस्य पर से आवरण हट गया था । रात में जब बिस्तर पर लेटी तो गांव गली की चर्चा चल पड़ी तब काकी ने बताया कि लट्टू गांव आ गई है । क्रांति आश्चर्य चकित रह गई ।

"कैसे काकी जी ? वह तो सुना था किसी के...साथ भाग गई थी ?"

"अरी वह किण के संग कोई गई वा दई मारा उसका जेठ कई बेच दिया था । दो चार मानस हाथों हाथ उठा कै ले गया । पण वा भी थी धरम वाली । उसी रात गिरती पड़ती घर चली आई । इब मनफूल भी समझा । भाई की नाड़ पकड़ सब जान लिया । तो वह लट्टू का भाग इब तो फिर गया ।"

आश्वस्ति की लम्बी श्वास क्रांति के मुंह से निकल गई । सत्य ही लट्टू तो बेचारी निरपराध ही थी ।

मनफूल ने लट्टू को पुन: स्वीकार कर लिया । सीता की अग्नि परीक्षा पूर्ण हुई वह निर्दोष साबित हुई थी किन्तु सूर्पणखा अभी जीवित थी ।

अब पहली और दूसरी का अखाड़ा था । मनफूल का अपराधी मन कहता उसकी सीता सावित्री ने बहुत कष्ट

उठाए हैं और दूसरी ताल ठोक कर सामने खड़ी हो जाती । मनफूल की चारपाई कोने से निकल ओसारे में आ गई लट्टू तो घर गृहस्थी में रमी रहती किन्तु दूसरी तो रणचंडी बन बैठी थी । भाई भौजाई से तो चूल्हा न्यारा हो ही गया था ।

"तू मनै बकस मेरी जान छोड़" एक दिन वास्तव में ही उसने हाथ जोड़ दिए थे दूसरी के समक्ष तो एक क्षण वह सोचती रह गई फिर पाँव पटक तुरंत उठ खड़ी हुई । घाघरी (लंहगा) की गाछ उठा उसने अपना फूला पेट दिखाते हुए कहा ।

"और या? इस दिलद्दर नै किसके गले मढ़ूं ?"

मनफूल ने माथा पकड़ लिया । करनी के फल तो भोगने ही होंगे । लट्टू उसकी भी सेवा टहल करती रही । सासू जी के भी पांव दबाती रही ।

"इब के दुख उसका धनी एक मीठी नजर उस पर डाल दे बस सब दुख दूर ।"

एक दिन सुबह मुंह अंधेरे दूसरी ने घर सिर पर उठा लिया । दाई आई अथवा नहीं तब तक नन्हा शिशु धरती पर आ गया था । लट्टू अकेली दौड़ भाग करती रही । दूसरी बिस्तर में पड़ी सोंठ पंजीरी खाती रही । सांझ सवेरा पंख लगा उड़ते रहे । कोई कहे । "दो भाइयों की जोड़ी बन गई"

"नई तो राणी पुरानी तो बांदी ही रह गई"

लट्टू को तो बांदी बनने में भी सुख । सासू जी ने एक दिन नेत्र मूंद लिए । सारा गांव इक्ट्ठा हुआ सब ने मिल कर बुढ़िया का क्रिया-कर्म कर दिया ।

लट्टू बिना हिचक सब करती जाय दूसरी हाथ पर हाथ धरे बैठी रहे तो एक दिन मनफूल ने
रौताणी है । इकली वा

"नास पिट्टे इस सब
(कारण) मनै लाया के । अप
काम करना कोनी तब दो चा
घूंसों से उसकी भी पूजा हो ग
लट्टू ने मनफूल का हाथ पकड़ थाम
लिया उसके शरीर में टीस उभर आई ।
किन्तु दूसरी में वह कहां । क्रोध में
होंठ काट लिए किंचित अवसर की
तालाश में थी । एक मैना पिंजरे से
उड़ गई । नन्हा पालने में हिलक-हिलक
कर रो रहा था उसे क्या अब पलट
कर आना था । लट्ठू से न रहा गया
कलेजा दुख से हूलने लगा उसने अपनी
छाती उसके मुंह से लगा दी बच्चा
चपर-चपर मुंह चलाने लगा । ●

73 बनारसी दास
स्टेट, दिल्ली-110007

भारतीय पशु और पक्षी

शकुन्तला धवन

भारत के प्राचीन ग्रंथों में नाना प्रकार, रंग रूप तथा गुणों के पशुपक्षियों का विस्तृत वर्णन मिलता है । इन ग्रंथों में उन्हें दो प्रमुख वर्गों में बांटा गया है – 1. जांगल और 2. आनूप ।

जंगल में रहने वाले पशुपक्षियों को "जांगल" और जल के समीप रहने वालों को "आनूप" कहते थे ।

जांगल पशुपक्षियों के आठ भेद थे: 1. जंघाल (जांघ के बल चलने वाले), 2. बिलस्थ (बिल में रहने वाले), 3. गुहाशय (गूफा में सोने वाले), 4. परामृग (वृक्षों पर चढ़ने वाले), 5. विष्किर (कुरेदकर खानेवाले), 6. प्रतुद (चोंच से पदार्थ नोचकर खाने वाले), 7. प्रसह (जबरदस्ती छीन कर खाने वाले), 8. ग्राम्य (गांव में रहने वाले) ।

आनूप पशुपक्षियों के पांच भेद थे: 1. कुलेचर (नदी आदि के कुल पर चलने वाले), 2. प्लव (जल पर तैरने वाले), 3. कौशस्थ (ढक्कन के मध्य रहने वाले), 4. पादी (पांव वाले जल जंतु) तथा 5. मत्स्य (मछली आदि) । विभिन्न प्रकार के अधिक महत्व वांले पशुपक्षी निम्नलिखित हैं :–

अजगर, ऊंट, ऊद, कछुआ, कपोत, कपोतक (पंडुक), कस्तूरी, कस्तूरीमृग, कलविंक, कुत्ता, कोकिल, खजन, गवल, गिद्ध, गिलहरी, गेंडा, गौर, गौरैया, गोह, घड़ियाल, चकोर, चक्रवाक, चमरी, चमगादड़, चातक, चित्रगर्दभ, चींटी, चीता, चील, छिपकली, जलकाक, जलपरी, टिड्डी, तेंदुआ, तोता, त्रिखंड, दीमक, धनेश, नाग, नागराज, नीलगाय, बाघ, बिच्छू, बिल्ली, बुलबुल, भालू, भेड, भैंसा, महाश्येन, मैना, मोर, बानर, शशक, श्येन, सिंह, सूअर, हाथी, कौआ, चर्खी या सातभाई, शामा, भुजंगा, दर्जिन, चिड़िया, बया, मूनिया, लालतूती, अबाबील, भरुत, चंडुल, शकरखोरा, कठफोड़वा, नीलकंठ, बसंता, महोखा या कुकुम, पतरिंगा, हरियल, भततीतर, बटेर, चित्र-तितिर, श्वेत उलूक, शूशोलूक, हंस, महा हंस, बनहंसक, हंसक, बंजुल, और मंजूक, क्रौंच, सारस, खरगोश, गगाकुररी, सामान्य कुररी, कुररिका, वलाक, लघु वलाक, सर्पपक्षी, शर्मीली बिल्ली, उड़न लोमड़ी, छछुंदर मोल, कांटेदार चूहा, पंडा, बिज्जू, बघेरा, तेंदुआ, लिक्स, लकड़-बग्घा, गीदड़, लोमड़ी, नेवला, ह्वेल, संसू, डाल्फिन, ड्यूगांग, साही, गिनी, पग, गधा, खच्चर वनमहिष, वज्रदेही .*

शकुन्तला धवन,
69, भाई परमानन्द नगर,
दिल्ली-110009

क्षेत्र के बारे में पाठकों की राय

... दूसरी तरफ ... सामग्री में एकरूपता की स्थिति इसकी अपनी विशेषता है जो अन्य किसी भी पत्रिका में देखने को नहीं मिलती, यही कारण है कि मैंने अपने कई मित्रों को इसके नियमित ग्राहक एवं पाठक बनने के लिए बाध्य किया है।

कुरुक्षेत्र का अप्रैल 1979 अंक बड़ी बेसब्री के बाद मिला। यह अंक आदि से अंत तक काफी ज्ञानवर्द्धक एवं रोचक रहा। इसके मुख्य पृष्ठ पर ग्रामीण सबाला की मुस्कान फिर से भारतीय सम्पन्नता की याद ताजा कर देती है। 1979-80 के बजट के संबंध में जितनी तीखी आलोचनाएं की जा रही हैं उनकी वास्तविक स्थिति संपादकीय लेख से काफी स्पष्ट हो जाती है। तथा कुछ छिछली आलोचनाओं का इसमें निराकरण भी हो जाता है। इस अंक की सारी सामग्री एक दूसरे से इतनी बढ़ी-चढ़ी लगी कि मेरे सम्मुख 'को छोट कहत अपराध' का प्रश्न उपस्थित हो गया। कुल मिलाकर इस अंक की सभी रचनाएं काफी प्रभावोत्पादक तथा सराहनीय रहीं। विशेषकर जे० पी० भेंटवार्त्ता, दरिद्रता से सम्पन्नता की ओर, ग्राम विकास की नींव परिवार नियोजन, कृषि आश्रित उद्योगों की भूमिका, ... रामराज्य का स्वप्न, ... गरीबी के दिन लद गए, ... टूटती मान्यताएं, आदि उल्लेखनीय रहे। इस अंक के लिए संपादक मंडल एवं सभी लेखकों को बहुत बहुत बधाई।

यदि संभव हो तो कुरुक्षेत्र के अगले अंकों में देश के अन्य अग्रगण्य उच्च कोटि के विद्वानों के देश की सम-सामयिक समस्याओं पर भेंट-वार्ता तथा परिचर्चाएं भी आयोजित की जानी चाहिएं। एक बात और देश में समय-समय पर एवं विशेषज्ञ-समितियों के प्रतिवेदनों की संक्षिप्त जानकारी देते रहने से कुरुक्षेत्र के पाठक काफी लाभान्वित होंगे। साथ ही इसे शहरों की अपेक्षा गांवों में और अधिक पहुंचाने की व्यवस्था बड़े पैमाने पर की जानी चाहिए। तभी इसके उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है तथा जिनके लिए यह प्रकाशित हो रही है वे इससे भरपूर लाभ उठा सकते हैं और देश के आर्थिक विकास में बहुत बड़ा योगदान कर सकते हैं। कुरुक्षेत्र एवं कुरुक्षेत्र परिवार के भावी विकास के लिए हमारी हार्दिक शुभ कामनाएं।

विश्वनाथ शर्मा 'विद्यार्थी,
ग्राम अब्बूपुर, पो० गोरखपुर,
जिला पटना (बिहार)

कुरुक्षेत्र का अप्रैल 1979 का अंक पढ़ने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अंक ने मुझे कई दृष्टियों से प्रभावित किया। यद्यपि कुरुक्षेत्र में कृषि और ग्राम विकास सम्बन्धी बातें अधिक विस्तार के साथ छपी हैं पर इन के साथ कई बातों के सन्दर्भ में साहित्यिकता और काव्यमयता भी विद्यमान है। इसमें ग्राम विकास सम्बन्धी अनेक लेख हैं। उदाहरण के लिए : श्री चरण सिंह का "कृषि और ग्राम विकास के परिव्यय में 67 करोड़ रु० की वृद्धि, राधा कान्त भारती का "कृषि विकास का नया कार्यक्रम", डा० योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण' का "ग्राम विकास की नींव : परिवार नियोजन तथा ब्रजमोहन अग्रवाल का "भारत के आर्थिक विकास में कृषि आश्रित उद्योगों की भूमिका" आदि लेख ग्राम विकास पर पूर्ण प्रकाश डालते हैं। इन के अलावा इसमें कई कविताएं भी हैं जो सहृदय पाठक को निश्चित रूप से आकर्षित करती हैं और साथ ही मार्ग दर्शन भी करती हैं। उदाहरण के लिए रामजी पांडेय द्वारा लिखित "राही पथ पर बढ़ते जाना" श्रीमती इन्दिरा परमार द्वारा लिखित "रोशनी" आदि। कहानी "रास लीला" भी काफी अच्छी तथा प्रेरणाप्रद है। इस अंक में "पहला सुख निरोगी काया" नामक स्तम्भ भी बहुत उपयोगी है। इसमें बसन्तकालीन बिमारियों तथा उनके उपचार की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया गया है। इस प्रकार यह अंक बहुत ही प्रेरणाप्रद और उपयोगी है। हम चाहते हैं कि इसी प्रकार की सामग्री सदा ही अन्य अंकों में भी प्रकाशित होती रहेगी।*

मधु शर्मा
डी०/1. पुरानी गुप्ता कालोनी (समीप)
विजय नगर, दिल्ली-9

[पृष्ठ 20 का शेषांश]

आकर्षण हाई-ब्रिड नारियल की चमक फीकी कर देगा।

फिलीपीन का 'मेकापुनो' नारियल अपने भरपूर एवं सुकोमल गूदे के लिए सारे संसार में प्रसिद्ध है। लखनऊ के "नैशनल बांट निकल गार्डन' में 'मेकापुनो' के नमूने देखे जा सकते हैं। लक्षद्वीप के 'माइक्रो' नारियल अपने नाजुक नन्हे आकार के लिए प्रसिद्ध है। नारियल की सबसे बड़ी जाति 'सान रेमोन' कहलाती है।

भारत का सब से पुराना और सबसे सम्मानित फल यदि कोई है, तो नारियल ही है। धर्म-कर्म में जो स्थान नारियल का है, वह अन्य किसी फल का नहीं। वैदिक साहित्य में नारियल का ही उल्लेख सर्वाधिक मिलता है।

नारियल के लिए कहा जा सकता है कि इसका तो अणु-अणु मानव की सेवा के लिए समर्पित है। रेशे से लेकर गूदे तक, इसका कोई भाग ऐसा नहीं है, जिस का कोई-न-कोई उपयोग मानव न करता हो। बेशक नारियल घनी और विस्तृत छाया नहीं दे सकता, किन्तु इस का सुघड़, मजबूत तना झोंपड़ों का आधार-स्तम्भ जिस प्रकार बनता है, वह किसी भी अन्य वृक्ष के लिए सम्भव नहीं है। उस के पत्तों से झोंपड़ों की छत तैयार की जाती है। इस प्रकार यह गरीब वर्ग का सच्चा साथी है।

अनेक खनिजों से युक्त कच्चा नारियल आबाल-वृद्ध सभी को कितना पसंद है, यह बताने की जरूरत नहीं। पक्के नारियल का पानी भी स्वादिष्ट, शीतल और पौष्टिक होता है। उस का गूदा पचने में जरा भारी होते हुए भी स्वाद और पौष्टिकता में बहुत बढ़ा-चढ़ा है। गूदे के साथ गुड़ का सेवन करने से, शीत ऋतु में, जीवनदायिनी ऊष्मा मिलती है। गूदा निकाल देने पर जो कठोर खोल बच जाता है, वह गरीबों के बर्तन की तरह काम आता है। अमीरों के यहां भी पानी उलीचने आदि में खोल इस्तेमाल होता है।

खुजली की रामबाण दवा नारियल से मिलती है--उसके खोल को जला कर खुजली पर लगाने की सिफारिश आयुर्वेद में बड़े उत्साह के साथ की गई है।

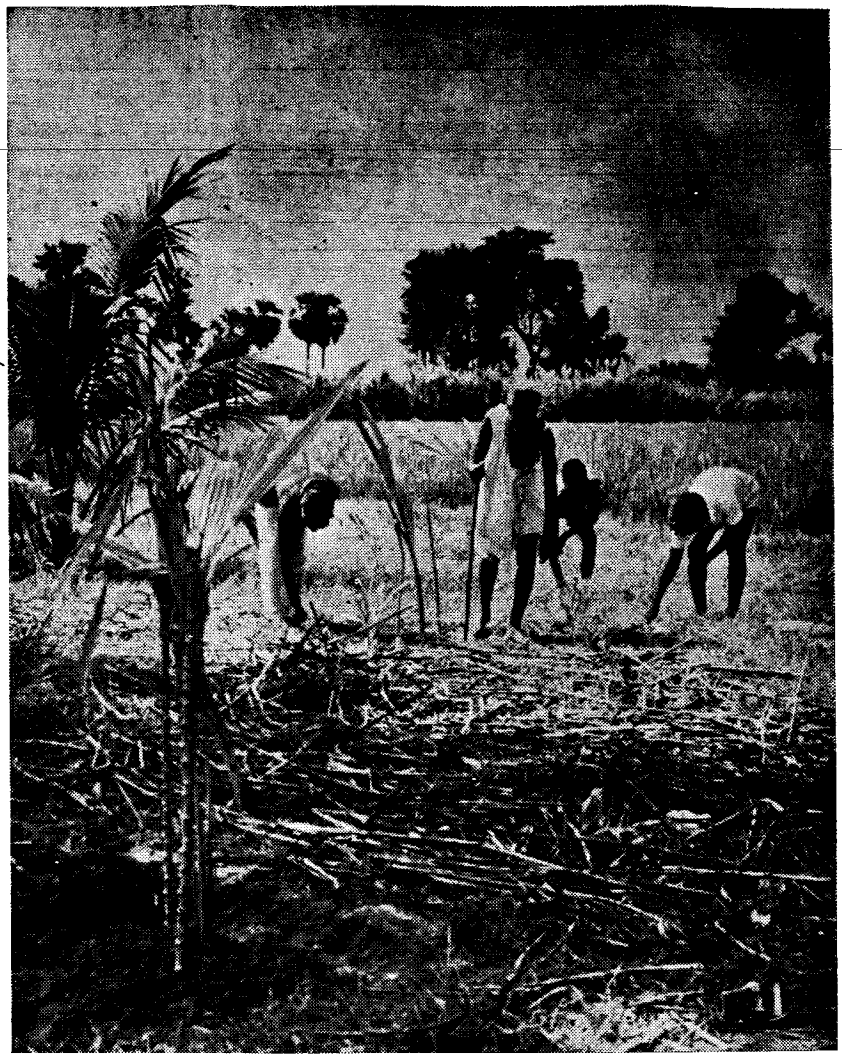

धान के खेत में नारियल की पौध

नारियल के उतरे हुए रेशे अंगीठी में जलाए जाते हैं। इस राख से यदि बर्तन साफ किए जाएं, तो वे एकदम चमक उठते हैं। रेशे उतारते समय नारियल की जो भूसी गिरती है, मानव उसे भी नहीं छोड़ता। अंगीठी में जल कर यह भूसी भी अपनी उपयोगिता सिद्ध करती है।

नारियल का तेल साबुन उद्योग में बहुतायत से इस्तेमाल होता है। बंगाली महिलाओं की केश राशि इतनी घनी और लम्बी होने का कारण यही माना जाता है कि वे अपने सिर में नारियल का तेल डालती हैं। दक्षिण भारत में नारियल का तेल ही सर्वाधिक खाया जाता है। डिब्बों या शीशियों में बन्द नारियल का तेल तो बहुत महंगा है। दक्षिण वाले इतने अमीर नहीं हैं कि इतने महंगे तेल का भोजन में प्रयोग कर सकें। दूसरी ओर, यह भी सच्चाई है कि वे सिवा नारियल के अन्य कोई तेल नहीं खाते। समस्या का हल यों निकाला गया है कि दक्षिण में, घर-घर में नारियल का तेल निकालने की मशीनें लगी हुई हैं। मशीन में नारियल डाल कर हाथ से ही तेल निकाल लिया जाता है। डिब्बा-बन्द तेल की तुलना में यह तेल बहुत गाढ़ा, चिकना और सुगन्धित होता है। खाने में इसी को इस्तेमाल किया जाता है। आत्मनिर्भरता का कितना श्रेष्ठ उदाहरण है यह!

नारियल के रेशों से मजबूत सुतली बनती है, अनेक कुटीर उद्योग पनपते हैं यह लिखने की तो जरूरत ही नहीं है।

20-ए, परवारा अपार्टमेंट्स रामनगर,
एस० वी० रोड, बोरीवल्ली, पश्चिम
बम्बई-400092

Regd. No. D(D)/98

विश्व बाल-वर्ष, 1979 में बच्चों के लिए विशेष पुस्तकें

—	**श्री कृष्ण कथा**—ले० सीताराम चतुर्वेदी (गीता के जन्मदाता भगवान् कृष्ण की जीवन कथा एक नए रूप म, सरल भाषा में—सचित्र)	रु०	8–00
—	**पर्वत देवता**—ले० राधेश्याम शर्मा (संसार की प्रसिद्ध लोक कथाओं से चुनी हुई 11 मनोरंजक कहानियां—सचित्र)	रु०	5–00
—	**तेन्दुआ और चीता**—ले० रामेश बेदी (तेन्दुआ और उसकी बिरादरी के अन्य जानवरों की विस्तृत व रोचक जानकारी—सचित्र)	रु०	8–00
—	**असली जीमाकड़े**—ले० रामेश बेदी (राजस्थान की चुनी हुई 14 लोक कथाएं—सचित्र)	रु०	7–50
	पहेलियां—संकलनकर्ता—सूर्यनारायण सक्सेना (भारत में प्रचलित 540 पहेलियां)	रु०	7–50
अंग्रेजी में			
—	**चिल्ड्रन्स महाभारत**—ले० माथुराम भूतलिंगम	रु०	6–50
—	**एडवेन्चर्स आफ ए० स्पेस क्रेफ्ट**—ले० मोहन सुन्दर राजन	रु०	10–00
—	**थिंगज़ आफ ब्यूटी**—ले० विद्या दहीजिया	रु०	12–50
	टु फार अ.फ लैंडस लांग एगो—ले० कृष्ण चैतन्य	रु०	8–00
उर्दू में			
—	**पहेलियां**— संकलनकर्ता शाहबाज हुसैन—नन्द किशोर विक्रम	रु०	8–00
हमारे अन्य प्रकाशन			
—	**चाचा नेहरू की कहानी** (चित्रों में)—ले० एस० डी० सावन्त और एस० डी० बादलकर	रु०	3–50
—	**हमारा स्वतंत्रता आन्दोलन** (चित्रों में)—ले० एस० डी० सावन्त	रु०	3–50
—	**लो गुब्बारे**—ले० जय प्रकाश भारती (11 रोचक कहानियां)	रु०	4–00
—	**राम गंगा का शेर**—ले० चन्द्रदत्त "इन्दु"	रु०	3–50
—	**तुलसी का ब्याह**—ले० दुर्गा भागवत	रु०	3–00
—	**पश्चिम भारत की लोक कथाएं**	रु०	4–00
—	**देश विदेश की लोक कथाएं**	रु०	5–50
—	**शेर का दिल**—ले० बंसीलाल गुप्त	रु०	5–50
—	**धनुआ राजा**	रु०	5–00
—	**आदर्श विद्यार्थी बापू**—ले० सावित्री देवी वर्मा	रु०	2–00
—	**सिंह**—ले० रामेश बेदी	रु०	3–25
—	**गैंडा**—ले० रामेश बेदी	रु०	1–00
चिड़ियों की दुनिया—ले० राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह,	सजिल्द मूल्य	रु०	13–00
चिड़ियों की जानकारी देने वाली एक रोचक पुस्तक। लेखक द्वारा चित्रित	साधारण ,,	रु०	10–00

आगामी प्रकाशन

कहानियां बच्चों के लिए (बंगाली), टैगोर की कहानियां, बच्चों के लिए (हिन्दी), उपनिषद् की लोक कथाएं (हिन्दी), विश्व की लोक कथाएं (हिन्दी, असमिया, तेलूगू, कन्नड़, मलयालम) आदि।

हमारी सुप्रसिद्ध व लोक-प्रिय पत्रिका बालभारती: (मासिक) के वार्षिक ग्राहकों को रु० 5/- या इससे अधिक की पुस्तकें खरीदने पर 20 प्रतिशत छूट—वार्षिक चंदा रु० 9/-) डाक खर्च मुफ्त। 10/- रु० से कम के आदेश पर पंजीकृत शुल्क अतिरिक्त भेजिए।

पुस्तकें स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं से लें या सम्पूर्ण बाल साहित्य की जानकारी के लिए लिखें:—

व्यापार व्यवस्थापक

प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

पटियाला हाउस, नई दिल्ली सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली; 8, एस्पलेनेड ईस्ट, कलकत्ता; कामर्स हाउस (दूसरी मंजिल), करीमभाई रोड, बैलर्ड पीयर, बम्बई; शास्त्री भवन, 35, हैडोज रोड, मद्रास; बिहार स्टेट को-आपरेटिव बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना; प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम।

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
प्रबन्धक भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।